चन्दामामा
सितम्बर १९६९
75 P

इस क्षण क्या आप का
टूथपेस्ट दांतों की सड़न का
मुकाबला कर रहा है ?

# सिग्नल २४ घंटे आप के दांतों की सुरक्षा करता है
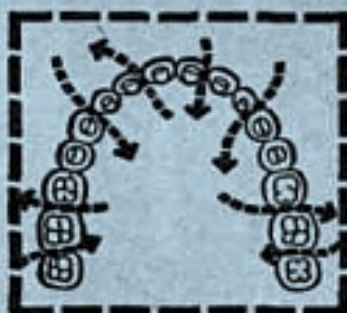
सिग्नल की लाल धारियों में
हैक्साक्लोरोफ़ीन है,
जो सड़न पैदा करने वाले
कीटाणुओं को दूर करता है।

लिंटास-SG.22-77 HI

हिंदुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
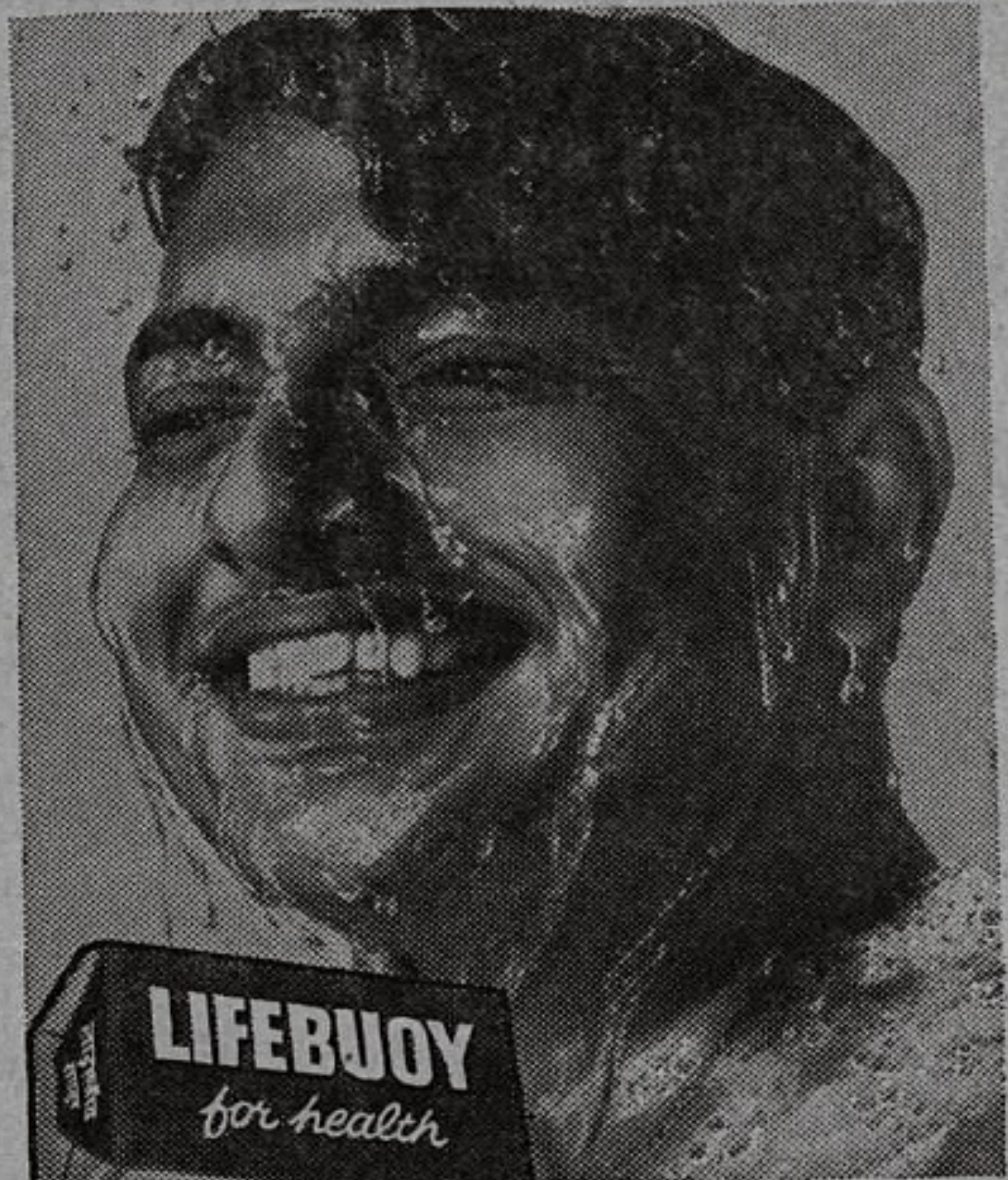
चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
अनेक पाठकों से हमें पत्र मिले कि चन्दामामा में अन्य बाल-पत्रिकाओं की भाँति विज्ञान संबंधी रचनाएँ प्रति मास प्रकाशित किया करें। किंतु हम अपने पाठकों को सूचित करना चाहते हैं कि यह पत्रिका पूर्णतया कहानी प्रधान है और हम इसके सिद्धांतों में परिवर्तन करना नहीं चाहते हैं। चन्दामामा की लोकप्रियता उसकी नीति में ही है। पाठक स्वयं जानते हैं कि चन्दामामा अपनी नीति के कारण ही प्रिय बनी हुई है।
वर्ष: २१ सितम्बर १९६९ अंक: १

# अचार का चोर

एक गाँव में एक अध्यापक था। वह सारे गाँव के लड़कों को पढ़ाता था। अध्यापक को जो शुल्क मिलाता उस से परिवार चलाना मुश्किल था। क्योंकि एक दर्जन के क़रीब उसके बच्चे थे।

गाँव का पटवारी संपन्न परिवार का था। वह चाहे तो अध्यापक की सब तरह से मदद कर सकता था, लेकिन अव्वल दर्जे का कंजूस और मक्खीचूस था। इसलिए वह केवल सहानुभूति दिखाता था। पटवारी की माँ अस्सी साल की बूढ़ी थी। वह कंजूसी में पटवारी को भी मात करनेवाली थी।

एक बार पटवारी के घर में दो झारी अचार रखा गया। मगर अध्यापक को थोड़ा भी अचार दिया नहीं गया। एक झारी भर अचार अध्यापक के घर में भी होता तो वह कुछ दिन जैसे तैसे काट देता। इसलिए अध्यापक ने पटवारी के घर से अचार उड़ाने का निश्चय किया। एक दिन संध्या के समय अध्यापक पटवारी के घर गया। इधर-उधर की बातें कर थोड़ी देर बिताया, जब सब लोग अपने अपने काम में लगे थे, तब अध्यापक चिल्ला पड़ा–'सुनोजी, मैं घर जा रहा हूँ।' इसके बाद मौक़ा पाकर रसोई घर में घुस पड़ा, अचारवाला एक झारी उठाकर पिछवाड़े से अंधेरे में घर चला गया।

दूसरे दिन पटवारी यह सोच ही रहा था कि कौन उठा ले गया होगा, उसकी पत्नी ने आकर कहा–"और कौन होगा? वही दरिद्र अध्यापक ले गया होगा। कल संध्या को वह यहाँ आया था। उसके यहाँ से जाते किसी ने नहीं देखा। उसके बाद हमारे घर कोई आया ही नहीं।"

प्रमोद कुमार

"छी, छी! ऐसी बातें अपने मुंह से न निकालो। बेचारे अध्यापक कभी चोरी ही नहीं कर सकते!" पटवारी ने कहा।

"क्यों नहीं कर सकता? गरीबी सब-कुछ करा सकती है। तुम तुरंत गाँव के मुखिये से फ़रियाद कर अध्यापक के घर की तलाशी करवा लो। अचार का झारी न मिला तो तब पूछो!" पटवारी की माँ ने कहा।

पटवारी ने तलाशी लेना अच्छा न समझा। क्यों कि सारे गाँव के लोग जानते थे कि पटवारी का अध्यापक पर अगाध विश्वास है। उसने कई बार अध्यापक के बड़प्पन की तरीफ़ की है।

"अध्यापक के घर की तलाशी लेने से हमारी इज्जत धूल में मिल जायगी। अचार गया तो गया, कोई चिंता की बात नहीं।" पटवारी ने कहा।

"यह तुम क्या कहते हो, बेटा! आज अचार चोरी गया, कल और चीज़ चोरी जायगी! इस चोरी की किसी न किसी तरह से टोह लेनी है। मैं एक उपाय बता देती हूँ। हमारी अलमारी को यह कहकर पटवारी के घर में रखवा दो कि हम एक महीने के लिए तीर्थ यात्रा पर जा

रहे हैं। मैं उस अलमारी के अन्दर बैठ जाऊँगी। तुम शाम को अध्यापक के घर जाकर यह कह दो कि हमने यात्रा स्थगित की है और अलमारी को अपने घर लाओ! इस बीच में उसकी चोरी का पता लगाऊँगी।" पटवारी की माँ ने समझाया।

माँ की यह सलाह पटवारी को अच्छी न लगी, पर लाचार होकर उसने मान लिया। पटवारी की माँ की अपनी काफ़ी निजी संपत्ति थी। उसकी बात न मानने से शायद वह उस संपत्ति से वंचित हो जायगा। इसलिए उसकी बात मानना पटवारी अपना कर्त्तव्य समझता था।

दुपहर के समय अध्यापक के बच्चों ने कहा—"माँ, हमें खाना खिलाओ!" अलमारी के अन्दर बैठी बूढ़ी रोटी खाने लगी। बूढ़ी के दांत न थे। इस लिए रोटी को मुँह में रखकर उसके गलने पर खाने की कोशिश करने लगी।

इस बीच बच्चे चिल्ला उठे—"माँ! पटवारी के घर का अचार दो!"

ये बातें सुननेवाली बूढ़ी उद्रेक में आकर चिल्ला उठी—"चोर के बच्चे! अब न बचोगे!" इस बीच रोटी का टुकड़ा गले में अटक गया। उसका दम घुटने लगा। थोड़ी देर तक छटपटाकर वह मर गयी।

शाम को पटवारी ने अध्यापक के घर अपने नौकर भेजें। नौकरों ने पटवारी से कहा—"अध्यापकजी! पटवारीजी तीर्थयात्रा पर न जा सके। अलमारी वापस मांगी है।" अध्यापक ने नौकरों के हाथ अलमारी भेज दी।

पटवारी ने अलमारी खोलकर देखा तो उसकी माँ भीतर मरी पड़ी थी।

पटवारी घबरा गया और अध्यापक को बुला भेजा। पटवारी हर बात में अध्यापक की सलाह लिया करता था। पटवारी ने अध्यापक से कहा—"अध्यापकजी! मेरी

दूसरे दिन प्रातःकाल पटवारी ने अध्यापक को घर बुला भेजा और कहा—"अध्यापकजी, मैं सपरिवार तीर्थाटन पर जा रहा हूँ। हमारे जो कुछ सोने व चाँदी के आभूषण हैं, उन्हें अलमारी में रखकर आपके घर छोड़कर जाना चाहते हैं। आपको कोई एतराज नहीं है न?"

"खुशी से रखकर जाइये।" अध्यापक ने अपनी सम्मति दी। बूढ़ी को अलमारी में बंदकर पटवारी ने अलमारी को अध्यापक के घर पहुँचा दिया। बूढ़ी अपने साथ रोटियाँ ले आयी थी।

माँ अचानक मर गयी है। बीमार भी तो न थी। यह बात गाँववालों को मालूम हो जायगी तो यही सोचेंगे कि मैंने धन के लोभ में पड़कर उनको मार डाला है। इस लाश को गायब कर देने का कोई उपाय सोचिये और मेरी इज्जत बचाइये। पर यह खबर किसी के कान में न पड़ने पावे।"

"आप रुपये खर्च करने के लिए तैयार हो जायेंगे तो मैं सब कुछ ठीक कर दूंगा। आपको डरने की कोई ज़रूरत नहीं।" अध्यापक ने समझाया।

पटवारी की हिम्मत बंध गयी। उसने अध्यापक के हाथ में एक सौ रुपये रख दिये। अध्यापक ने बूढ़ी की लाश अपने कंधे पर डाल दी। उस में फेंकने का निश्चय कर अध्यापक निकल पड़ा।

पड़ोसी गाँव के ज़मीन्दार बड़ी रात गये घोड़े की गाड़ी पर लौट रहा था। वह उसी रास्ते से आ रहा था, जिस रास्ते से अध्यापक जा रहा था। अध्यापक ने इधर-उधर दौड़कर घबराने का अभिनय किया और घोड़ागाड़ी के निकट आते ही बूढ़ी की लाश को घोड़ों के आगे गिरा दिया।

गाड़ी रुक गयी। जमीन्दार गाड़ी से उतर पड़ा। "माँ! क्या तुम मुझे छोड़कर स्वर्ग सिधार गयीं! मुझे अकेले छोड़ जाने का तुम्हारा मन कैसे हुआ?" ये शब्द कहते अध्यापक रोने लगा।

"देखो जी! तुम भी कैसे बे अक्लमंद हो! गाड़ी से बचना भी नहीं जानते! लो, ये रुपये रख लो।" यह कहते जमीन्दार ने रुपयों की थैली अध्यापक के हाथ में धर दी और चला गया।

इसके बाद अध्यापक पटवारी की माँ की लाश को नदी के पास ले गया। उसे नदी में फेंककर घर लौट आया।

# सियार का फ़ैसला

दादा आम लेकर घर लौटा। माँ ने उसे काटकर बच्चों में बांट दिया। बच्चे झगड़ने लगे। एक ने कहा कि मुझे छोटा टुकड़ा मिला है। दूसरे ने कहा कि मुझे गुठली चाहिये। तीसरे ने कहा कि मुझे सब से ज्यादा चाहिये।

"अरे, बच्चो! तुम्हें जरा भी अक़्ल नहीं! तुम से पानी के बिलाव अच्छे मालूम होते हैं!" दादा ने डाँट बतायी।

बच्चे आम के टुकडों की बात भूल गये और दादा को घेरकर पूछने लगे–"दादा! पानी के बिलाव हम से कैसे अच्छे हैं?"

"तुम लोग इसलिए नाराज़ हो कि तुम से दूसरों को ज्यादा टुकड़े मिले हैं। लेकिन पानी के बिलाव यह सोचकर परेशान हुये थे कि दूसरे को उससे भी कम मिलता है! तुम में और उन बिलावों में यही अंतर है!" दादा ने समझाया।

"क्या पानी के बिलावों ने आम बांट लिये थे, दादाजी! तुम जो कहते हो, हमारी समझ में नहीं आता। पूरी कहानी साफ़ साफ़ बताओ न!" बच्चों ने हठ किया।

"तब तो तुम लोग चुपचाप बैठ जाओ।" दादा ने कहानी शुरू की।

तिब्बत नामक एक देश है। उस में एक नदी बहती है। उस नदी के किनारे दो पानी के बिलाव निवास करते थे। उन दोनों में गाढ़ी दोस्ती थी। वे समय पर एक दूसरे की मदद किया करते थे।

नदी की मछलियाँ उनका मुख्य आहार था। जानते हो, पानी के बिलाव मछलियाँ कैसे पकड़ते हैं? पानी का एक बिलाव नदी में उतरता है। वह मछलियों को किनारे की ओर भगाता है। जो मछली किनारे पर आती है, उसे पकड़कर खा लेता है। लेकिन मछलियों को पकड़कर घर

राधेश्याम

ले जाना थोड़ा मुश्किल होता है। क्यों कि पानी का बिलाव एक मछली को किनारे की ओर भगाकर दूसरी मछली को भगाने जाता है तो पहली मछली पानी में उछलकर भाग जाती है। हर मछली के वास्ते पानी का बिलाव किनारे पर आ जावे और उसे मारकर, फिर पानी में उतरना थोड़ा मुश्किल है।

इस परेशानी का अनुभव दोनों बिलावों ने किया। इसलिए उन दोनों बिलावों ने मिलकर मछली पकड़ने का निश्चय किया। एक बिलाव का काम था, मछलियों को किनारे की ओर भगाने का और दूसरे का काम उन्हें पकड़कर मार डालने का था। इस तरह पानी का एक बिलाव नदी में और एक किनारे पर रहकर मेहनत करके, आखिर दोनों ने कई मछलियाँ पकड़ लीं। अब उन मछलियों को दोनों ने मिलकर बांटना चाहा।

"भाई, उन मछलियों को दो हिस्सों में बाँट लो।" किनारे पर बैठा बिलाव बोला।

नदी में रहनेवाले बिलाव ने मछलियों को बांटने में संकोच किया। उसका डर था कि कहीं भूल से दूसरे बिलाव का हिस्सा कम देकर उसके साथ अन्याय
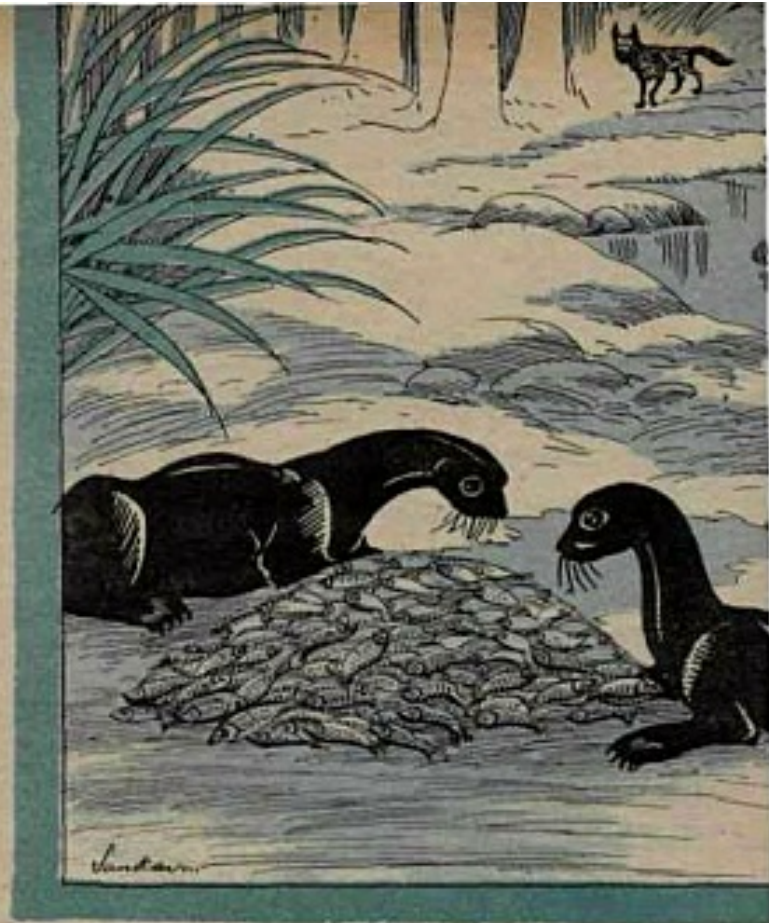
करना ठीक नहीं है। इसलिए उसने दूसरे बिलाव से कहा—"भैया, तुम्हीं बांट लो।" उसके मन में भी यही शक था।

दोनों बिलाव यह सोचकर डर के मारे मछलियों का ढेर लगाकर चिंता में बैठे हुये थे कि एक दूसरे का अन्याय न करे।

इस बीच में मुखर नामक एक सियार उधर से आ निकला। उसने मछलियों के ढेर को देखा। उसे सुबह से बहुत-कुछ ढूंढने पर भी शिकार न मिला था। भूख से वह सियार तड़प रहा था। उसने अपने मन में सोचा—"ओह! कितनी मछलियाँ हैं!" फिर उसने पानी के बिलावों से

पूछा–"अरे, मेरे दामाद! तुम लोग क्यों चिंता में पड़े हुये हो?"

"हमने ये मछलियां पकड़ लीं। लेकिन इस डर से चुप बैठे हुये हैं कि बांटने में एक दूसरे का अन्याय न कर बैठे।" बिलावों ने जवाब दिया।

"क्या मैं इन मछलियों को तुम दोनों में बराबर बांट दूं?" सियार ने पूछा।

बिलावों ने सोचा कि उनकी समस्या हल हो जायगी। इसलिए दोनों ने मान लिया।

सियार एक बिलाव को थोड़ी दूर ले गया और बोला–"वास्तव में मछलियों को पकड़ने में तुमने किया ही क्या? दूसरे बिलाव ने पानी में जाकर बड़ी होशियारी से मछलियों को किनारे की ओर भगाया। तुमने सिर्फ़ किनारे पर आयी मछलियों को मार डाला। इसलिए तुमको छोटा हिस्सा मिलना चाहिये।"

इसके बाद सियार दूसरे बिलाव को थोड़ी दूर अपने साथ ले गया और उसे समझाया–"सारी मेहनत तुम्हारे दोस्त ने की है। किनारे पर पत्थर-कंकड़, दूब, ऊबड़-खाबड़ हैं। तुमने बड़ी आसानी से मछलियों को किनारे की ओर भगाया, उनके फिर पानी में कूदने के पहले दौड़कर आया। उनको पकड़कर मार डाला और तुम्हारे लिए सुरक्षित रखा।"

ये बातें सुनकर दोनों बिलाव अपमान से दब गये। इसके बाद सियार ने सारी मछलियों के सर और पूंछ काट दिया। पानी में काम करनेवाले बिलाव को सर दे दिये और किनारे पर मछलियों को मारनेवाले बिलाव को पूंछें दे दीं। उसने दोनों का जो फ़ैसला किया था, इस काम के शुल्क के रूप में मछलियों के मध्य भाग को ले लिया और अपनी होशियारी पर खुश होता हुआ घर चला गया।

# शिथिलालय

[ २० ]

[ शिखिमुखी और विक्रमकेसरी अपने दो अनुचरों के साथ ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों की ओर चल पड़े। वे कामाख्या नगर में पहुँचकर एक सराय में ठहरें। उनकी गैर हाजरी में पुजारी ने उनके कमरे में प्रवेश किया। शिखिमुखी ने उसे पकड़ने का प्रयत्न किया, पर वह नीचे कूदकर घोड़े पर भाग गया। बाद—]

सराय के सामने बड़ा कोलाहल मचा। दो आदमी घोड़ों पर अंधाधुंध भाग रहे थे और दो युवक अपने हाथों में तलवार लिये "ठहरो, ठहरो" चिल्लाते उनका पीछा कर रहे थे। यह दृश्य देख सराय में ठहरे हुये सभी मुसाफ़िर अहाते में आ दौड़े। अजित और वीरभद्र ने थोड़ी दूर तक पुजारी का पीछा किया। लेकिन घोड़ों पर भागनेवाले पुजारी और सवरगीध को पकड़ न पाये। इसलिए वे निराश हो वापस लौटे।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी अपने कमरे के किवाड़ बंदकर नीचे उतर आये। तब तक अजित और वीरभद्र हाँफते हुये उनके पास आये और बोले—"हुज़ूर, हमने उनका पीछा किया, फिर भी वे लोग भाग गये। शिखिमुखी को इस बात की बड़ी चिंता हुई कि वह दुष्ट पुजारी हाथों में

आते-आते बचकर भाग निकला। क्यों कि उसने कभी यह न सोचा था कि पुजारी इतनी ऊँचाई से नीचे कूदकर भाग जायगा।

"शिखी! उस दुष्ट का पिंड छूटता दिखाई न देता। हमने नाहक़ उस से बातचीत करते देरी की। कमरे में प्रवेश करते ही उसका वध करना चाहिये था। हमने बड़ी भूल कर दी।" विक्रमकेसरी ने कहा।

"हाँ, इस बार वह हमारे सामने आया तो बस हम यही करेंगे। उस दुष्ट से हमें बात भी क्या करनी है? वह बार बार हमें चकमा दे रहा है। इस बार उसकी दाल गलने की नहीं। तुम भी सावधान रहो।" शिखिमुखी ने जवाब दिया।

सराय के सामने इकट्ठे हुये लोग शिखिमुखी और विक्रमकेसरी से तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगे। वे सोचने लगे कि दो व्यक्ति आकर चोरी करके भाग गये हैं। सराय का मालिक हाथ मलते तुतलाते स्वर में बोला–"भाइयो, इस में मेरी बड़ी भारी गलती है। आप लोगों की गैर हज़िरी में मुझे पुजारी को अपने कमरे में प्रवेश करने नहीं देना चाहिये था। क्या क़ीमती चीज़ें तो उठाकर भाग नहीं गया है न?"

"वह जैसी क़ीमती चीज़ें चाहता है, वैसी हमारे पास नहीं हैं। हम तो यात्री हैं। पुण्य तीर्थों का सेवन करने के लिए हम आये हुये हैं। हमारे पास क़ीमती चीज़ें क्या हो सकती हैं?" शिखिमुखी ने समझाया।

"मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हो रही है कि आपके कमरे में चोरी नहीं हुई है। उस पुजारी को देखने से लगता है कि वह इभ्यु जाति का होगा। उस जाति के लोग जितने ईमानदार हैं, उतने दगाबाज भी होते हैं। उन लोगों से बचकर

# शिथिलालय

## [ २० ]

[ शिखिमुखी और विक्रमकेसरी अपने दो अनुचरों के साथ ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों की ओर चल पड़े । वे कामाख्या नगर में पहुँचकर एक सराय में ठहरें । उनकी गैर हाज़री में पुजारी ने उनके कमरे में प्रवेश किया । शिखिमुखी ने उसे पकड़ने का प्रयत्न किया, पर वह नीचे कूदकर घोड़े पर भाग गया । बाद—]

सराय के सामने बड़ा कोलाहल मचा ।

दो आदमी घोड़ों पर अंधाधुंध भाग रहे थे और दो युवक अपने हाथों में तलवार लिये "ठहरो, ठहरो" चिल्लाते उनका पीछा कर रहे थे । यह दृश्य देख सराय में ठहरे हुये सभी मुसाफ़िर अहाते में आ दौड़े । अजित और वीरभद्र ने थोड़ी दूर तक पुजारी का पीछा किया । लेकिन घोड़ों पर भागनेवाले पुजारी और सवरगीध को पकड़ न पाये । इसलिए वे निराश हो वापस लौटे ।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी अपने कमरे के किवाड़ बंदकर नीचे उतर आये । तब तक अजित और वीरभद्र हाँफते हुये उनके पास आये और बोले–"हुजूर, हमने उनका पीछा किया, फिर भी वे लोग भाग गये । शिखिमुखी को इस बात की बड़ी चिंता हुई कि वह दुष्ट पुजारी हाथों में

आते-आते बचकर भाग निकला। क्यों कि उसने कभी यह न सोचा था कि पुजारी इतनी ऊँचाई से नीचे कूदकर भाग जायगा।

"शिखी! उस दुष्ट का पिंड छूटता दिखाई न देता। हमने नाहक़ उस से बातचीत करते देरी की। कमरे में प्रवेश करते ही उसका वध करना चाहिये था। हमने बड़ी भूल कर दी।" विक्रमकेसरी ने कहा।

"हाँ, इस बार वह हमारे सामने आया तो बस हम यही करेंगे। उस दुष्ट से हमें बात भी क्या करनी है? वह बार बार हमें चकमा दे रहा है। इस बार उसकी दाल गलने की नहीं। तुम भी सावधान रहो।" शिखिमुखी ने जवाब दिया।

सराय के सामने इकट्ठे हुये लोग शिखिमुखी और विक्रमकेसरी से तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगे। वे सोचने लगे कि दो व्यक्ति आकर चोरी करके भाग गये हैं। सराय का मालिक हाथ मलते तुतलाते स्वर में बोला—"भाइयो, इस में मेरी बड़ी भारी गलती है। आप लोगों की गैर हज़िरी में मुझे पुजारी को अपने कमरे में प्रवेश करने नहीं देना चाहिये था। क्या क़ीमती चीज़ें तो उठाकर भाग नहीं गया है न?"

"वह जैसी क़ीमती चीज़ें चाहता है, वैसी हमारे पास नहीं हैं। हम तो यात्री हैं। पुण्य तीर्थों का सेवन करने के लिए हम आये हुये हैं। हमारे पास क़ीमती चीज़ें क्या हो सकती हैं?" शिखिमुखी ने समझाया।

"मुझे यह जानकर बड़ी ख़ुशी हो रही है कि आपके कमरे में चोरी नहीं हुई है। उस पुजारी को देखने से लगता है कि वह इभ्यु जाति का होगा। उस जाति के लोग जितने ईमानदार हैं, उतने दगाबाज़ भी होते हैं। उन लोगों से बचकर

रहना हर हालत में मुनासिब होगा।" सराय के मालिक ने कहा।

उस रात को शिखिमुखी और विक्रम केसरी ने आपस में चर्चा की और यह निर्णय किया कि ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों में इम्भु जाति वालों के प्रदेश को दिखाने वाले एक व्यक्ति को साथ ले जाना उचित होगा। सराय के मालिक से जब उन लोगों ने यह बात कही, तो वह चौंक कर बोला–"उस प्रदेश में जाना खतरे से खाली नहीं है। तुम लोगों को उस प्रदेश में जाने की ज़रूरत क्या है? वहाँ तो कोई तीर्थ भी तो नहीं है!"

इस पर हँसते हुये शिखिमुखी ने कहा–"आप इसलिए डरते हैं कि हमारे प्राण ख़तरे में पड़ जायेंगे। ऐसा भय हमें नहीं है। हमको मारने से किसी के हाथ कुछ लगनेवाला नहीं है। हम उस घाटी के सभी पुण्य तीर्थों को देखना चाहते हैं। हमने सुना है कि इम्भु जातिवालों के प्रदेश में बहुत ही पुराने मंदिर हैं। उनको हम ज़रूर देखना चाहते हैं।"

"तब तो तुम्हारी इच्छा पर छोड़ देता हूँ। तुम लोग कब रवाना होना चाहते हो? उस प्रदेश से भली भांति

परिचित एक युवक को मैं तुम्हारे साथ भेज दूँगा। उसके खाने-पीने का पूरा खर्च तुम लोगों को उठाना होगा। यहाँ लौटने पर उसे उचित पारितोषिक भी देना होगा।" सराय के मालिक ने अपनी शर्तें बतायीं।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी ने उसकी शर्तों को मान लिया। दूसरे दिन सूर्योदय के समय सराय का मालिक एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति को लाया। वह नाटा, मोटा और तंदुरुस्त था। उसका परिचय कराते बोला–"देखो, भाइयो! इसका नाम जांगला है। यह कहता है कि इम्भु जाति

उस से कहा—"हमें इस बात का डर नहीं है कि तुम ईमानदार हो या नहीं। हम चार आदमी हैं और तुम अकेले हो। लेकिन हमारी शंका यही है कि तुम इम्म्यु जातिवालों के प्रदेश से भलीभांति परिचित हो या नहीं? अगर तुम वहाँ के सभी स्थानों से अपरिचित हो तो तुमसे हमारा कोई प्रयोजन न होगा। इसलिए जाने के पहले ही साफ़ बतला दो।"

वाले सारे प्रदेशों को जानता है। यह भी उसी जाति का है। यह ईमानदार है और इसे मैं काफ़ी समय से जानता भी हूँ।"

शिखिमुखी ने जांगला को एड़ी से चोटी तक देखा। उसका चेहरा देख उसके स्वभाव का वह पता नहीं लगा सका। जांगला के ओंठों पर मुस्कुराहट खिल रही थी। पर उसके चेहरे पर कोई भाव प्रकट न हो रहा था। उसका चेहरा ऐसा लगता था, जैसे धूप और वर्षा से प्रताड़ित हुई कोई चट्टान हो।

जांगला का परिचय देकर सराय का मालिक चला गया। तब शिखिमुखी ने

"मैं कैसा ईमानदार हूँ, यह आप लोग खुद समझ लेंगे। मेरा जन्म और पालन-पोषण इम्म्यु जाति के प्रदेश में ही हुआ है। सराय के मालिक ने आप से बताया भी है कि मै उसी जाति का हूँ। वे मुझे अच्छी तरह से जानते हैं। मैं उस प्रदेश के कोने-कोने से खूब परिचित हूँ।" जांगला ने कहा।

"अच्छी बात है। तुम्हारा राह-खर्च तो हम उठायेंगे ही। साथ ही यात्रा से लौट कर कामाख्यापुर पहुँचने पर हम तुमको पारितोषिक के रूप में पाँच सोने के सिक्के देंगे। तुम्हें पसंद है? सोच कर बताओ।" शिखिमुखी ने पूछा।

"सोचने की क्या बात है? आप की मेहर्बानी है।" जांगला ने कहा।

"हमको उस घाटी के गोलभरा नामक इभ्यु जाति के गाँव में ले जाना है। हमने सुना है कि उसके आसपास में बहुत ही पुराना मशहूर मंदिर है।" शिखिमुखी ने कहा।

गोलभरा का नाम सुनते ही जांगला चौंक पड़ा और बोला—"जी सरकार, वहाँ का रास्ता दिखाऊँगा। मैं उस गाँव को जानता हूँ। लेकिन जैसे आप बताते हैं, वैसा मशहूर मंदिर वहाँ पर कोई नहीं है। मैं पहले ही बता देता हूँ, ताकि आप लोग बुरा न माने।"

"हमने सुना है। है न विक्रम?" यह कहते शिखिमुखी ने विक्रम की ओर देखा। विक्रम के स्वीकृति सूचक सर हिलाते ही शिखी फिर जांगला से बोला—"तुम हमको उस गाँव का रास्ता दिखाओ। हम खुद ढूँढ़ लेंगे। सुनो, हम लोगों को आज शाम को ही रवाना होना है, तैयार हो जाओ।"

जांगला उन्हें नमस्कार करके चला गया। उस दिन शाम को रास्ते के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थों को दो खच्चरों पर डालकर शिखिमुखी और विक्रमकेसरी अपने साथियों के साथ नदी की घाटियों की ओर चल पड़े। जांगला उनका मार्गदर्शन कर रहा था।

अंधेरे के फैलते-फैलते वे सब जंगल के एक छोटे तालाब के पास पहुँचे। उन लोगों ने निश्चय किया कि उस रात को वहाँ ठहरकर खाना बना ले और विश्राम कर दूसरे दिन तड़के फिर यात्रा चालू करे। रसोई बनाने में अजित और वीरभद्र लग गये। जांगला सूखी लकड़ी लाने जंगल में चला गया।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी एक पेड़ से सटकर बैठे अपने आगे के कार्यक्रम पर विचार करने लगे। विक्रमकेसरी को

जांगला पर पूरा विश्वास जमा न था। उसने अपनी शंका प्रकट की कि शायद वह उन्हें गलत रास्ते पर ले जाकर फँसा सकता है। शिखिमुखी के मन को भी यही शंका सता रही थी।

"हम सावधान रहेंगे। तुम सोचते हो कि जांगला शिथिलालय के पुजारी का अनुचर है। वह दुष्ट पुजारी ही हमारा कुछ बिगाड़ न सका तो यह कमबख्त हमारी क्या हानि कर सकता है?" शिखिमुखी ने कहा।

विक्रमकेसरी कुछ कहने जा रहा था कि इतने में लाल कुत्ता भूँक उठा और घनी

झाड़ियों की ओर निकल पड़ा। शिखिमुखी चुपचाप कुत्ते के पीछे चलने लगा। विक्रमकेसरी तलवार खींचकर चारों तरफ़ फैले घने अंधकार में आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगा।

लाल कुत्ता झाड़ियों में थोड़ी दूर बढ़ा, फिर रुककर सर उठाये भूँकने लगा। शिखिमुखी ने वृक्षों की घनी झाड़ियों की ओर ध्यान से देखा। उसका संदेह था कि दुश्मन कहीं उन डालों पर छिपे बैठा हो। लेकिन वहाँ किसी के निशान दिखाई न पड़े। उसी समय उसे लगा कि थोड़ी दूर पर कोई बातचीत कर रहे हैं। वह आगे बढ़ने को हुआ, तब लाल कुत्ते ने बीच में आकर उसको रोका और ज़ोर से भूँकना शुरू किया।

इस बार शिखिमुखी को पैरों की आहट स्पष्ट सुनाई दी। देखते-देखते जांगला कंधे पर सूखी लकड़ियाँ रखे तेजी से उनकी ओर आने लगा। शिखिमुखी ने उसकी ओर दो क़दम बढ़ाये, इतने में ही पेड़ की डालों में से एक अजगर झट से जांगला पर गिरा और उसके शरीर को अपनी लपेट में लेने लगा। लाल कुत्ता भूँकते आगे कूद पड़ा।

जांगला भयकंपित स्वर में ज़ोर से चिल्ला पड़ा।

शिखिमुखी का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसे यह समझते देर न लगी कि जांगला कैसे भयंकर खतरे में पड़ गया है। उसने तलवार निकालकर अजगर का सर काटना चाहा। लेकिन अजगर जांगला की कमर के ऊपरी भाग को लपेटकर उसके सर को दबोचने की कोशिश कर रहा है। उस अंधेरे में तलवार का वार ज़रा भी चूक गया तो अजगर के सर के बदले जांगला का सर कट जाने का खतरा है।

जांगला घबराकर कराह रहा है। उसके कंठ से शब्द फूट नहीं रहे हैं। शिखिमुखी ने कहा—"जांगला, डरो मत। अभी मैं अजगर का सर काट देता हूँ।" यह कहते बायें हाथ से अजगर का सर पकड़कर बाहर खींचते हुए तलवार से उसकी गर्दन पर वार किया।

सर के कटते ही, जांगला के शरीर से अजगर का शरीर चक्कर काटता हुआ नीचे गिर पड़ा। जांगला ज़ोर से कराहकर धम्म से एक ओर गठरी की भाँति लुढ़क पड़ा। यह चिल्लाहट सुनकर विक्रमकेसरी, अजित और वीरभद्र वहाँ पर दौड़े हुए आ पहुँचे।

शिखिमुखी जांगला को उठाने की कोशिश करते हुये बोला—"अजगर का सर मैं ने काट दिया है। उसकी पकड़ में तुम्हारे हाथ-पैर तो टूट नहीं गये हैं न?"

जांगला जवाब देने ही जा रहा था कि उस अंधेरे में से यह आवाज़ आयी—"अघोरी लोग भक्ति से जिस अजगर की पूजा करते हैं, उसका सर किसने काटा? लो, तुम्हारा सर काटने जा रहे हैं, तैयार हो जाओ!" ये शब्द कहते चार-पाँच भयंकर आकृति के लोग शूल उठाये शिखिमुखी की ओर दौड़े आये। (और है)

# नित्य यौवन

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल, सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन्, लगता है कि तुम अपूर्व शक्तियों को प्राप्त करने के लिए मेहनत उठा रहे हो। वे शक्तियाँ कुछ लोगों को जन्म के साथ ही प्राप्त होती हैं। जंगली जातियों में ऐसी शक्तिवाले अनेक लोग हैं। लेकिन उन शक्तियों के द्वारा आखिर नुक़सान ही होता है। श्रम को भुलाने के लिए मैं तुमको अपूर्व शक्तियोंवाली एक कहानी सुनाता हूँ, सुनो!"

बेताल यों कहने लगा :–

दण्डकारण्य प्रांत की जंगली भील जाति के कुछ लोगों को जन्म के साथ ऐसी शक्तियाँ प्राप्त होती थीं। शिशु के जन्म के साथ ही यह बात प्रकट हो जाती थी।

## वेताल कथाएँ

इला जिस गाँव में रहती थी, उसके पास एक ज़मींदार का गाँव था। उस गाँव में उपेन्द्र नामक कुम्हार जाति का एक जवान था। वह देखने में बड़ा सुंदर था, लेकिन गरीब था। गाँव की कई लड़कियाँ उपेन्द्र के साथ शादी करने को छटपटाती थीं। इला ने जब पहली बार उपेन्द्र को देखा, तभी वह उसके लिए अपनी जान तक देने को तैयार हो गयी।

लेकिन उपेन्द्र इला की परवाह नहीं करता था। असल में वह किसी युवती से प्यार नहीं करता था। वह यही सोचता था कि कोई पैसेवाली लड़की उसके साथ शादी करे तो क्या ही अच्छा हो!
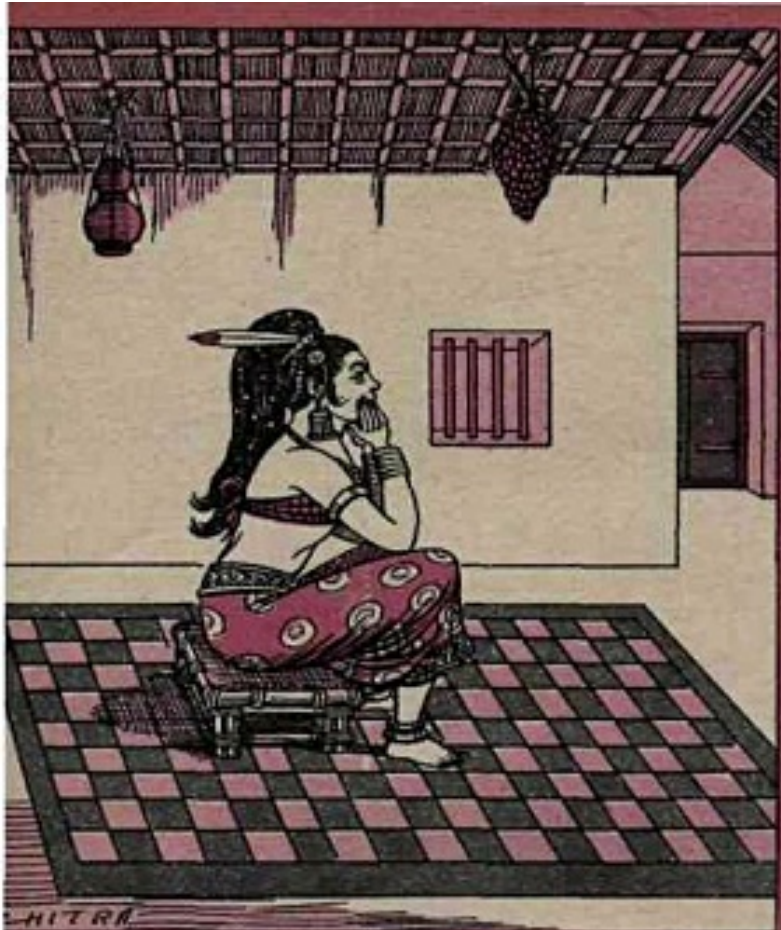
लड़के के जन्म के साथ दांत उगते और लड़की के सर पर गुमटा पैदा होता तो यह माना जाता कि उन्हें अपूर्व शक्तियाँ प्राप्त हैं। ऐसे शिशुओं को जन्म देनेवाली माताएँ उन रहस्यों को गुप्त रखतीं, क्योंकि लोगों को मालूम हो जाता तो ऐसे शिशुओं को उसी वक़्त मार डालते थे।

एक भील लड़की के सर पर एक गुमटा उग आया। उस लड़की का नाम इला था। इला की माँ ने इस रहस्य को गुप्त ही रखा। इला जब बड़ी हो गयी और उसके सर पर बाल उग आये तब इस रहस्य को छुपाना बड़ा सरल हो गया।

एक त्योहार के दिन सभी लोग पर्व मनाने में लगे थे। उस दिन इला घर से बाहर नहीं निकली। वह ध्यान करते यह सोचते घर पर ही बैठी रही कि उपेन्द्र उसे खोजते वहाँ पर आ जाये तो बड़ा अच्छा होगा। सारा दिन बीत गया। सूरज डूबने को था। लेकिन उपेन्द्र इला के घर की ओर न पटका। वह गाँव की अमीर लड़कियों के साथ खेलते खुशी मनाने में लगा हुआ था।

इला ने अपने घर में रंगोलियाँ सजायीं। कपड़े फाड़कर चीथड़े तैयार किये। मंत्र पढ़ते उपेन्द्र के नाम का उच्छारण करते चीथड़ों में गाँठें लगायीं। उन गाँठों को रंगोलियों के बीच जहाँ-तहाँ रख दिया।

खेल में निमग्न उपेन्द्र अचानक अपने दल को छोड़ बाहर आया और उसके पैर अप्रयत्न ही भील बस्ती की ओर ले गये। थोड़ी देर बाद वह अपने को इला के घर के सामने पाया। उपेन्द्र के दर्वाज़ा खटखटाते ही इला ने किवाड़ खोल दिये। इला को देखते ही उपेन्द्र का मन खुशी से नाच उठा।

दूसरे ही दिन इला और उपेन्द्र की शादी हुई। उपेन्द्र इला को अपने घर लाया। वह उसे बहुत प्यार करता था, पाँच साल के अन्दर उनके पाँच बच्चे भी हुए।

उपेन्द्र ने देखा कि उसकी पत्नी एक एक प्रसव के बाद पहले से ही ज़्यादा सुंदर और जवान लगने लगी। इस तरह उसकी सुंदरता और जवानी भी घटने के बदले बढ़ती ही गयी। इला दुल्हिन के दिन से भी ज़्यादा पाँच बच्चों की माँ बनने के बाद और आकर्षक दिखाई दे रही थी।

इला में नित्य नवीन यौवन देख उपेन्द्र चौंक उठा और उसने यह बात अपनी माँ से कह दी।

"बेटा, शायद तुम्हारी पत्नी कोई जादूगरनी होगी। ऐसी औरत को पत्नी बनाना महान पाप है। यह बात तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों के लिए ठीक नहीं है।" उपेन्द्र की माँ ने उसे समझाया।

"माँ! इला जादूगरनी है या नहीं, यह बात हमें कैसे मालूम होगी?" उपेन्द्र ने अपनी माँ से पूछा।

"अगर वह जादूगरनी है तो अमावास्या के दिन आधी रात के वक़्त कोई तांत्रि

तुम्हारे बच्चों को जान से हाथ धोना पड़ेगा। जादूगरनी को जान से जलाना ही अच्छा मार्ग होता है। दूसरे ढंग से उसे मारना मुश्किल है।" माँ ने बताया।

उपेन्द्र ने घबराये हुए स्वर में कहा–"माँ! पाँच बच्चों की माँ को मैं अपने हाथों से मार नहीं सकता।"

"अरे पगले! एक जान को तुम बचाना चाहते हो तो तुम लोगों के छे प्राण खतरे में पड़ जायेंगे। इसलिए तुमको उसे जलाकर राख कर देना होगा।" बूढ़ी ने आदेश दिया।

अपनी माँ से बड़ी देर तक बहस करने के बाद उपेन्द्र ने अपनी पत्नी को मार डालने का निश्चय किया। इसके बाद उसने अपने घर के सामने एक पेड़ के नीचे चिता बनायी और पेड़ पर एक फाँसी का फँदा तैयार किया।

यह सारा काम इला खिड़की में से देखती रही। उसने बाहर आकर अपने पति से पूछा–"यह सब किसलिए करते हो?"

"अच्छा, बता देता हूँ। तुम उस चिता पर चढ़ जाओ।" उपेन्द्र ने कहा।

इला चिता पर आ खड़ी हुई। उपेन्द्र ने उसके गले में फँदा लगाकर कहा–"तुम

पूजा किये बिना न रहेगी। तुम इसका पता लगाओ।" माँ ने सलाह दी।

अमावास्या का दिन आया। उस रात को उपेन्द्र सोने का अभिनय करते हुए जाग रहा था और उसने देखा कि इला आधी रात के वक़्त जाग गयी। चूल्हा जलाया, पानी गरम किया। बाहर से कुछ जड़ी-बूटियाँ लायी और मंत्र पढ़ते उन जड़ी-बूटियों को बर्तन में डाल दिया।

दूसरे दिन सवेरे उपेन्द्र ने ये सारी बातें अपनी माँ को सुनायीं।

"वह निश्चय ही जादूगरनी है। उसे तुम तुरंत मार न डालोगे तो तुम्हें और

जादूगरनी हो, इसलिए तुमको जलाकर मैं स्वयं अपने और अपने बच्चों की रक्षा करना चाहता हूँ।" यह कहकर उपेन्द्र ने चिता में आग लगायी।

चिता की लपटें ज्यों ही इला के कपड़ों को छूने लगीं त्यों ही उसने कोई मंत्र पढ़े और एक फूल के रूप में बदलकर पेड़ की शाखा से चिपक गयी।

दूसरे दिन ज़मीन्दार अपने घोड़े पर उधर से निकला। उसने मन में कहा—"इस पेड़ पर ऐसे फूल का होना बड़ा विचित्र मालूम होता है।" यह सोच उसने उस फूल को तोड़ा। उसे घर ले जाकर पानी में रखवाया और उस फूलवाले गमले को अपने कमरे में रखवा लिया।

ज़मीन्दार बूढ़ा था। उसके पत्नी व बच्चे कोई न थे। एक रसोइन थी। वह ज़मीन्दार के कमरे में खाना लाकर रख देती। ज़मीन्दार थोड़ा खाना खाकर सो जाता। ज़मीन्दार के सोते ही पानी में से फूल नीचे कूद पड़ा। इला के रूप में बदलकर बचा हुआ खाना खाकर फिर फूल बन पानी में कूद पड़ा।

रसोइन ने लौटकर देखा, थाली में कुछ न बचा था। उसे संदेह हुआ कि इसमें

कोई रहस्य की बात है। क्योंकि ज़मीन्दार कभी भी सारा खाना न खाता। आधे से अधिक खाना बचाता था और उसे रसोइन खाया करती थी। लेकिन उस दिन उसे एक दाना भी न बचा।

दूसरे दिन रसोइन ने आड़ में छिपे रहकर देखा कि फूल एक युवती बनकर खाना खाने के बाद फिर फूल बन गयी। उसने यह बात ज़मीन्दार को बता दी।

दूसरे दिन ज़मीन्दार ने खाना खाने के बाद जागते हुए इला को पकड़ लिया। इला ने बचाने की कोशिश की, लेकिन इला का जूड़ा ज़मीन्दार के हाथ में फँस गया।
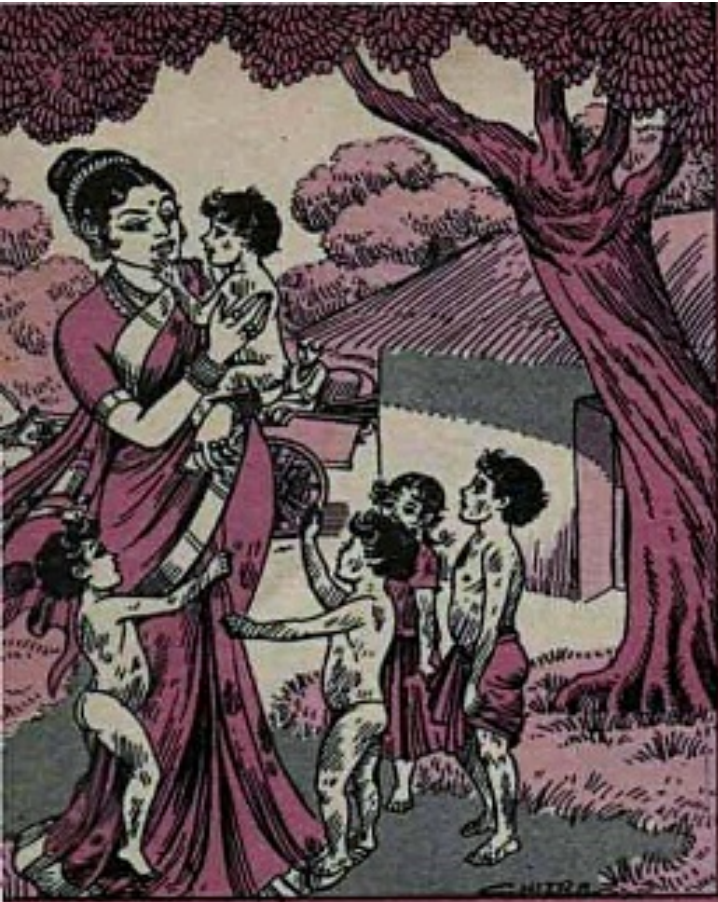
"मेरा जूड़ा छोड़ दीजिये। मुझे बड़ा दर्द होता है।" इला ने पूछा।

"मैं छोड़ दूंगा, लेकिन मेरी एक शर्त है। तुम फूल न बनकर मेरी पत्नी बनकर रह जाओ।" ज़मीन्दार ने कहा।

पहले इला ने न माना। ज़मीन्दार ने उसका जूड़ा पकड़कर खींचा और उसे मनवाया। ज़मीन्दार की पत्नी बनते ही इला ने रसोइन को निकाल दिया। रसोइन सीधे उन भीलों के पास गयी जो जादू जानते थे। उन्हें ज़मीन्दार की नयी पत्नी का सारा समाचार सुनाकर उससे बदला लेने का उपाय पूछा।

जादू जाननेवाले भीलों ने उसे बताया–"ज़मीन्दार की पत्नी जादूगरनी होगी। उसके सर पर गुमटा होगा। उस गुमटे के ऊपर के बाल काट दे तो उसकी शक्तियाँ जाती रहेंगी।" लेकिन रसोइन को यह मुश्किल-सा लगा कि ज़मीन्दार की पत्नी का जूड़ा कैसे काटे?

ज़मीन्दार ने अपनी पत्नी को अमूल्य वस्त्र और आभूषण ख़रीद कर दिये। वह ज़मीन्दार के साथ घोड़ेगाड़ी पर सैर करने जाया करती थी। एक दिन जब वे कुम्हार के घर के सामने से गुजर रहे थे, उसे मिट्टी में खेलनेवाले पाँच बच्चे दिखायी दिये।

इला ने झट गाड़ी रुकवा दी। नीचे उतर कर अपने बच्चों को चूम लिया। उसके क़ीमती कपड़े धूल से भर उठे, फिर भी उसने कोई परवाह न की। बच्चों को खुद पता न था कि इला उनकी माँ है। फिर भी उससे लिपटकर किलकार करने लगे। उपेन्द्र बाहर आया। उसने भी इला को पहचाना नहीं।

"ये बच्चे तुम्हारे हैं? तुम्हें शर्म नहीं आती कि इस तरह बच्चों को धूल में लोटने देते हो? देखो, ये बच्चे कैसे कमज़ोर हो गये हैं?" इला ने डांट बतायी।

"मैं गरीब हूँ, इन बच्चों को क्या खिला सकता हूँ?" उपेन्द्र ने कहा।

"कल तुम मेरे घर आओ, तुमको काम दूँगी। अग्रिम के रूप में ये रुपये लो।" यह कहते इला ने अपने पति के हाथ रुपयों की एक थैली दी।

दूसरे दिन उपेन्द्र ज़मीन्दार के घर गया।

"स्नानागार में थोड़ी मरम्मत करनी है, पहले यह काम करो।" यह कहते इला उपेन्द्र को स्नानागार के पास ले गयी और बोली– "देखो, तुम्हारे कपड़े धूल से भरे हुये हैं। पहले स्नान करो। मैं कपड़े दूँगी, पहन लो।"

उपेन्द्र को यह सब बड़ा विचित्र मालूम होने लगा। वह नहा कर नये कपड़े पहनकर बाहर आया। इला अपने को और रोक न सकी। उपेन्द्र का आलिंगन करते हुये उसने पूछा–"क्या तुमने मुझे नहीं पहचाना? मैं इला हूँ।"

तब तक उपेन्द्र को उसकी आँखों में देखने की हिम्मत न हुई थी। उसने पूछा– "तुम यहाँ पर कैसे आ गयी हो?"

"मुझे तुम पर इसलिए गुस्सा आया कि तुम मेरा पिंड छुड़ाना चाहते हो! इसलिए मैंने इस बूढ़े ज़मीन्दार से शादी की। लेकिन मैं ज़मीन्दार को नहीं

चाहती। तुम्हारे और बच्चों के वास्ते मेरी जान तड़प रही है। मैं भी तुम्हारे साथ चली आऊँगी।" इला ने पूछा।

"तुम जो सोचती हो, वह इतना सरल नहीं है। तुम दिखाई न दोगी तो ज़मीन्दार तुम्हारी तलाशी करायेंगे। तुम हमारे घर में मिल जाओगी तो समझो, हमें कैसी यातनाएँ भोगनी पड़ेंगी। फिर भी मुझे सोचने दो। मैं कल फिर तुम से मिलूँगा।" उपेन्द्र ने कहा।

"कल ज़रूर आना! भूलना नहीं!" यह कहते इला ने सारे आभूषण निकालकर गठरी बांधी और उपेन्द्र के हाथ दी।

उपेन्द्र जब घर लौट रहा था, तब रसोइन ने उसे देखा और पूछा—"तुम कहाँ से आ रहे हो?"

"ज़मीन्दार ने बुला भेजा तो वहाँ हो आ रहा हूँ। खाने की चीजें गठरी बांधकर दीं।" उपेन्द्र ने जवाब दिया।

"देखो, भैया! ज़मीन्दार की पत्नी के हाथ का कुछ न खाओ। वह जादूगरनी है। उसके हाथ का खाना खाओगे तो पत्थर बन जाओगे।" रसोइन ने समझाया।

"यह बात तुम कैसे जानती हो?" उपेन्द्र ने पूछा।

"मैं ज़मीन्दार के यहाँ रसोइन का काम करती थी। मैंने अपनी आँखों से ज़मीन्दार की पत्नी को कभी फूल और कभी औरत बनते देखा है। जब मैंने काम छोड़ दिया तब मुझे उसका रहस्य मालूम हुआ। अगर मुझे पहले मालूम होता तो उसके जादू, मंत्र और तंत्र धूल में मिला देती!" रसोइन ने कहा।

"कैसे? वह रहस्य कौन है?" उपेन्द्र ने पूछा। "अरे भाई, यह तो बड़ा आसान काम है। उसके सर के बाल काट दे तो वह मामूली औरत बन जायेगी। मुझे मौक़ा मिलता तो मैं ही ख़ुद कर देती।" रसोइन यह रहस्य बताकर चली गयी।

दूसरे दिन ज़मीन्दार के घर जाते उपेन्द्र ने अपनी थैली में अन्य उपकरणों के साथ एक कैंची भी रख ली। इला बड़ी उत्सुकता के साथ उपेन्द्र का इंतज़ार करती थी। उपेन्द्र को देख दर्वाज़ा खोलते हुये पूछा—"क्या तुमने कोई उपाय सोचा?"

"हाँ, हाँ! सोच लिया है, चलो तुम्हारे कमरे में।" उपेन्द ने उत्तर दिया।

दोनों कमरे में पहुँचे। झट उपेन्द्र ने इला को जोर से पकड़ा और कैंची से उसका जूड़ा काटने लगा।

"यह तुम क्या कर रहे हो?" ये शब्द कहते इला छटपटाने लगी। लेकिन उपेन्द्र ने इला के सारे बाल काटकर ही दम लिया।

जूड़े के कटने के साथ इला की सारी शक्तियाँ जाती रहीं और उसका नित्य यौवन भी गया। उसकी आँखें धँसी हुई थीं, शरीर ढीला पड़ चुका था।

इला अपने हाथों को देख रोते हुये बोली–"मेरा सारा सौंदर्य चला गया। अब मुझे देख तुम नफ़रत करोगे?"

"नहीं, इला! तुम मुझे इसी रूप में सुंदर लगती हो। चलो, हम अपने घर चलेंगे।" उपेन्द्र ने प्रसन्न स्वर में कहा।

वे दोनों जब जा रहे थे, तब रास्ते में उन्हें ज़मीन्दार मिला। उसने पूछा–"उपेन्द्र! मेरी पत्नी ने तुम्हें जो काम सौंपा था, उसे पूरा किया?"

"सरकार, माफ़ कीजियेगा। कुछ दिन पहले मेरी औरत कहीं भाग गयी थी, वह आपके नौकरों के बीच मिल गयी तो उसे घर ले जा रहा हूँ।" उपेन्द्र ने जवाब दिया।

"ज़रूर ले जाओ! पत्नियों का अपने पतियों को छोड़ भाग जाना महान अपराध है।" ज़मीन्दार ने कहा।

ज़मीन्दार ने घर में अपनी पत्नी को न पाकर सब जगह ढुंढ़वाया और आखिर ऊबकर रसोइन को वापस बुलवा लिया।

ज़मीन्दार के घर से जो गहने लाये थे, उन्हें बेचकर इला और उपेन्द्र अपने दिन सुखपूर्वक बिताने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन! मेरा एक संदेह है। नित्य यौवन खोयी हुई इला को उपेन्द्र ने घर लाकर उसके साथ गृहस्थी क्यों चलायी! क्या उसे छोड़ने की ताक़त उस में न थी? उस में अब अपूर्व शक्तियाँ भी तो नहीं थीं। उपेन्द्र इला को छोड़ भी दे तो

वह बदला न ले सकेगी! ऐसी हालत में भी उपेन्द्र ने उसे क्यों स्वीकार किया? यह रहस्य तुम जानते हुये भी न बताओगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने जवाब दिया—"उपेन्द्र कभी भी सौंदर्य के प्रति अनुरक्त न हुआ था। वह शादी के पहले भी इला पर मोहित न हुआ था। इला अपने मंत्रों की शक्ति के बल पर उपेन्द्र को अपने पास बुला सकी, लेकिन उसने अपने प्रेम के बल पर ही उपेन्द्र को अपने वश में किया। इस में कोई संदेह नहीं है कि उपेन्द्र के प्रति इला का प्रेम असाधारण है। उपेन्द्र केवल सौंदर्य पर मोहित नहीं है, इसका प्रमाण यह है कि उसने अपनी पत्नी के नित्य यौवन पर घबराकर इस बात की चर्चा अपनी माँ से की है। अगर वह सचमुच सौंदर्य पर आसक्त होता तो अपनी पत्नी के नित्य यौवना होने पर अपनी क़िस्मत पर फूला न समाता। जब उसे मालूम हुआ कि उसकी पत्नी का सौंदर्य जादू से भरा हुआ है, तब वह अपनी पत्नी को खोने के लिए भी तैयार हो गया। जब उसे यह भी मालूम हुआ कि उसी की भूल से इला ज़मीन्दार की पत्नी बनी है, तब भी उसने इला को दोष न दिया। लेकिन ज़मीन्दार के घर पर समस्त प्रकार के सुख भोगते हुये भी इला उपेन्द्र और उसके बच्चों के लिए तड़पती रही। ऐसी हालत में वह इला जैसी पत्नी को कैसे छोड़ सकता है? उसकी पत्नी नित्य यौवन से वंचित हो जाय तो उसे चिंता की कोई बात न थी। इसीलिए नित्य यौवन से वंचित अपनी पत्नी को उसने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया।"

इस प्रकार राजा के मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
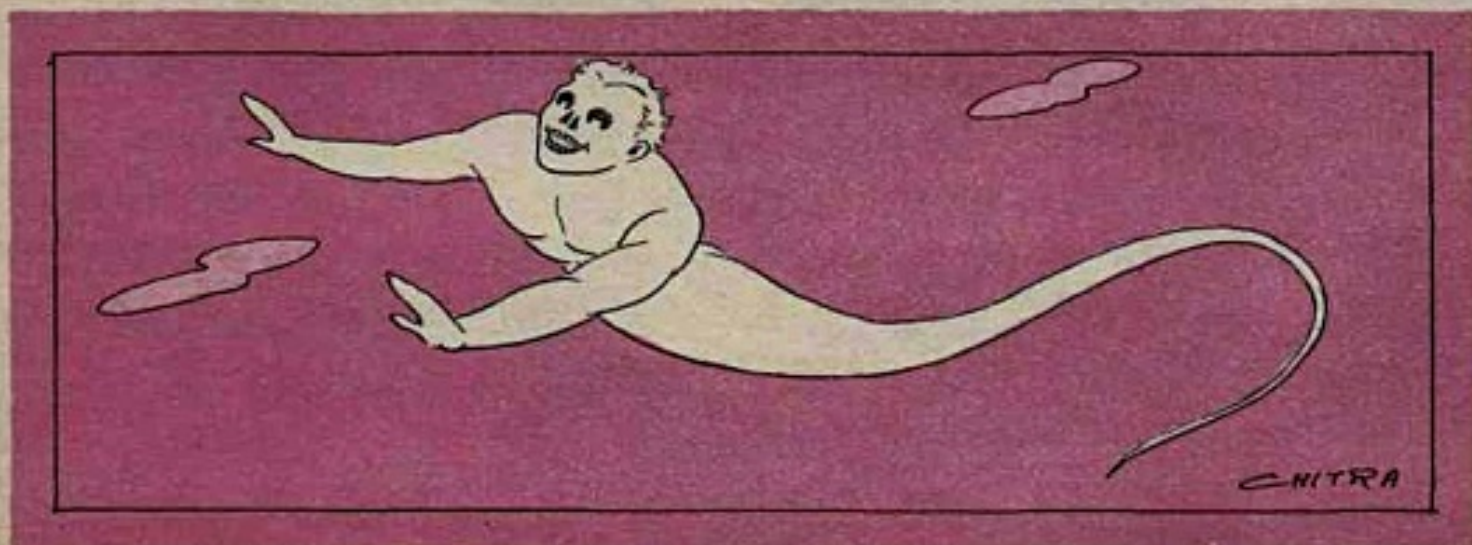
# सौंदर्य की होड़

एक बार वैकुण्ठ में भगवान विष्णु की पत्नियों में याने ज्येष्ठा देवी और लक्ष्मी देवी में यह वाद छिड़ा कि दोनों में कौन ज्यादा सुंदर है। वे इसका फ़ैसला करने के लिए विष्णु के पास पहुँचीं।

"तुम दोनों में एक दूसरे की सुंदरता अधिक बताकर इस झंझट में पड़ना मुझे कतई पसंद नहीं है। यदि तुम सचाई जानना चाहती हो तो ब्रह्माजी के पास चली जाओ।" भगवान विष्णु ने कहा।

वे दोनों ब्रह्मलोक में गयीं। सरस्वती के कारण पूछने पर दोनों ने बताया कि ब्रह्मा से यह जानने के लिए आयी हैं कि हम दोनों में कौन ज्यादा सुंदर है।

सरस्वती के द्वारा समाचार जानकर ब्रह्मा ने उन देवियों से कहा—"माताओं, आप दोनों मेरी आँखों के लिए समान सुंदर दीखती हैं। कोई भी पुत्र यह स्वीकार न करेगा कि अपनी माताओं से ज्यादा सुंदर नारी इस दुनियाँ में होगी। इसलिए आपके सौंदर्य की श्रेष्ठता का निर्णय करने की शक्ति मुझमें नहीं है। मेरी सलाह है कि आप दोनों कैलास में जाकर शिवजी से पूछिये। वे बड़े भोले हैं। सत्य कहने में संकोच नहीं करते।"

ब्रह्मा की सलाह के अनुसार ज्येष्ठादेवी तथा लक्ष्मी देवी कैलास जाकर पार्वती और परमेश्वर से मिलीं। जब शिवजी को यह मालूम हुआ कि वे दोनों सौंदर्य की श्रेष्ठता का निर्णय जानने के लिए आयी हुई हैं तब शिवजी ने उन से बताया—"आप दोनों ने मेरे सामने एक जटिल समस्या खड़ी कर दी है। मैं अक्सर जल्दबाजी में आकर अपने भक्तों को वरदान दे देता हूँ, उससे जो उलझनें पैदा होती हैं, उन्हें सुलझाने के लिए आपके

गंगाधर

पतिदेव की शरण लेता हूँ, ऐसी हालत में जब आपके पतिदेव ही इस समस्या को सुलझा न सके तब मेरे बस की बात नहीं है। बिना संकोच के असली बात बतानेवाला व्यक्ति नारद है। आप उससे पूछेंगी तो वह सच्ची बात बता देगा।"

उसी वक़्त नारद वहाँ आ पहुँचा।

"नारद! तुम बिना पक्षपात के यह बता दो कि हम दोनों में कौन ज़्यादा सुंदर है?" दोनों देवियों ने पूछा।

"माताओं, मैं ब्रह्मचारी हूँ। मैं सुंदरता की बात क्या जानूँ? यदि आप लोग अपने संदेह का निवारण करना चाहती हैं तो भूलोक में जाकर भद्रय्या श्रेष्ठी नामक एक वैश्य श्रेष्ठ से पूछिये। वे अवश्य आपकी शंका का निवारण करेंगे।" नारद ने समझाया।

इस पर वे दोनों भद्रय्या श्रेष्ठी के घर गयीं। उन्हें देखते ही श्रेष्ठी ने साष्टांग प्रणाम करके पूछा–"माताओं, मैं इसका कारण जान सकता हूँ कि आप दोनों का मुझ पर क्यों कर अनुग्रह हुआ?"

"हम दोनों में कौन ज्यादा सुंदर हैं? जल्द बता दो।" देवियों ने कहा।

"श्रेष्ठी ने कहा कि आप दोनों चलकर मेरे पास आ जाइये।" इसके बाद उन्हें वहीं जाने को कहा, जहाँ वे दोनों पहले खड़ी थीं। दोनों ने श्रेष्ठी के कहे अनुसार किया।

"आप दोनों की सुंदरता में बड़ा अंतर है। लक्ष्मीदेवी आते समय अधिक सुंदर हैं तो ज्येष्ठादेवी जाते समय ज्यादा सुंदर हैं।" श्रेष्ठी ने कहा।

श्रेष्ठी का जवाब सुनकर दोनों ख़ुश हुईं। इसके बाद लक्ष्मीदेवी आकर श्रेष्ठी के घर में बैठी गयीं। ज्येष्ठादेवी वापस चली गयीं। इसीलिए उस दिन से वैश्य परिवार के लोग धनी हुये।

# वात्सल्य

एक गाँव में एक किसान था। उसका लड़का मोहन बड़ा सुस्त व आवारा था। वह अपने पिता के काम में बिलकुल मदद न देता था। पिता को उस लड़के के आवारेपन पर बड़ी चिंता हुई। उसने लड़के को सुधारने के लिए डराया, धमकाया और समझाया। लेकिन कोई फ़ायदा न हुा।

मोहन जवान हो गया। पिता ने यह सोचकर उसकी शादी की कि परिवार की जिम्मेदारी के सर पर आने से वह सुधर जायगा। शादी के होते ही मोहन ने अपने पिता से पूछा—"पिताजी, मेरी जायदाद बांट कर दे दो। मैं अपनी ज़िंदगी आप जीऊँगा।"

पिता ने अचरज में आकर कहा—"तुम्हें इस घर में रहने में तक़लीफ़ ही क्या है! घर से अलग जाने को तुम से किसने बताया? तुम अपनी शक्ति के अनुसार थोड़ा-बहुत कमाकर मेरी आँखों के ही सामने रहोगे तो मुझे बड़ी ख़ुशी होगी।"

"पिताजी, मुझ पर प्रेम का अभिनय क्यों करते हो? तुम मुझ पर हमेशा नाराज़ होते हो! मुझ पर रत्ती भर भी तुम्हें प्रेम नहीं है। आज तक तुम ने मुझे गालियाँ दीं, पीटा और तंग किया। अब मैं स्वेच्छा से जीना चाहता हूँ तो अडंगा डालते हो! क्या अब भी मेरा अलग होकर सुखी होना तुम्हें पसंद नहीं है?" मोहन ने पूछा।

"सुनो, बेटा! ऐसा कभी मत समझो! तुम चाहे जहाँ भी रहो, मैं यही चाहूँगा कि तुम सुखी रहो।" यह कहकर पिता ने अपने बेटे का हिस्सा बांटकर दिया। मोहन अपनी जायदाद लेकर

सत्येन्द्र शर्मा

पास के एक दूसरे गाँव में गया। वहाँ पर मज़ूरी करते अपने दिन काटने लगा।

एक साल बीत गया। मोहन के एक लड़का हुआ। मोहन की तरह उसका लड़का भी काम चोर और पेटू निकला। उसके व्यवहार पर मोहन को बड़ा गुस्सा आता। एक दिन गुस्से में आकर मोहन ने अपने लड़के को पीटा। वह घर से भागकर अपने दादा के गाँव गया और सारी बातें उसे सुनायीं।

दादा अपने पोते को उसी गाँव में अपने एक दोस्त के घर में ले गया। उससे बातें करके अपने पोते को चार दिन तक वहीं रखने का इंतज़ाम किया।

मोहन अपने लड़के को न पाकर घबरा गया! उसने लड़के की बड़ी खोज की, लेकिन कहीं उसका पता न चला। मोहन लड़के को खोजते आखिर अपने पिता के पास पहुँचा और पूछा—"पिताजी, मेरा लड़का घर से भाग गया है। कहीं इधर तो नहीं आया? वह काम-वाम कुछ नहीं करता, आवारा बन गया है। इसलिए गुस्से में आकर मैंने उसे खूब पीटा। मार खाकर वह कहीं भाग गया है। आज तक घर नहीं लौटा।"

"भाग गया तो जाने दो! ऐसे सुस्त लड़के का रहना और न रहना बराबर है। क्या वह थोड़े ही तुम्हारा उद्धार करेगा? तुम चिंता न करो।" मोहन के पिता ने उसे समझाया।

मोहन लाचार होकर दुखी हो घर लौटा। अपने पति को अकेले वापस लौटे देख मोहन की पत्नी रोते-कलपते बोली– "लड़के को पीटने से क्या हुआ? तुमने थोड़े ही उसकी आदतों को बदल दिया? बेचारा न मालूम कहाँ कहाँ भूखा भटक रहा है?"

इकलौते लड़के को खोने के कारण मोहन ने मारे चिंता के चारपाई पकड़ ली।

मोहन के पिता को जब यह खबर मिली तब वह अपने पोते को साथ ले मोहन के घर आया। मोहन ने लड़के को देखते ही उसे गले लगाया और रोने लगा।

मोहन के पिता ने उसे सांत्वना देते हुए कहा–"बेटा, पिता का वात्सल्य ऐसा ही होता है! तुमने लड़के को इसलिए पीटा कि वह आवारा बनता जा रहा है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि लड़के पर तुम्हारा प्रेम नहीं है। देखो, चार दिन वह दिखायी न दिया तो तुम कैसे चिंता में घुलकर दुबले हो गये हो? मेरी भी यही हालत है। मैं ने भी यह सोचकर तुमको गालियाँ दीं और पीटा, ताकि तुम सुधर जाओ। इसका मतलब यह नहीं कि तुम पर मेरे दिल में मुहब्बत न थी। मेरे बहुत-कुछ समझाने पर भी तुमने न माना और घर से अलग हो गये। मुझे कितना दुःख हुआ था, अब तुम समझ सकते हो।"

इसके बाद मोहन अपनी पत्नी और बच्चे के साथ पिता का घर लौटा। खेती में उसकी मदद करते आराम से दिन बिताने लगा।

# विश्वास

एक शिष्य का अपने गुरु पर अपार विश्वास था। उसने अपने गुरु के नाम का स्मरण करते पानी पर चलकर नदी पार की। यह बात गुरु को मालूम हो गयी। गुरु ने सोचा–"ओह! मेरे नाम में ही ऐसी बड़ी महिमा है। मैं असल में कैसा महान व्यक्ति हूँ। मेरे लिए असंभव कौन कार्य है?"

दूसरे दिन गुरु ने "मैं!" कहते नदी के पानी पर चलने का प्रयत्न किया। लेकिन बेचारे पानी में उतरते ही नदी की धारा में डूबकर बह गया।

"कैसी अंगूठी? मैं क्या जानूं?" धीर ने. कहा।

"मैं ने तुम्हारे पि_ा को दिखाने के लिए तुम्हारे हाथ अंगूठी जो दी थी?" श्रीपुत्र ने कहा।

"मुझे आपने अंगूठी कब दी?" धीर ने पूछा।

श्रीपुत्र ने समझ लिया कि वह शूर नहीं है। इसलिए उसे बंदी बनाया। धीर का घोड़ा लौटकर सुधन्व के पास आया।

राजा ने भांप लिया कि धीर कोई खतरे में फँस गया है। तुरंत उसने शूर को बुलाकर सारी बातें समझायीं और कहा—"तुम तीनों में से धीर ही मेरा असली पुत्र है। वह किसी खतरे में फँस गया है। तुम्हें उसे बचाना होगा!"

शूर ने राजा के चरण छूकर कहा—"महराज! मैं दासी-पुत्र होकर भी आपकी कृपा से राजकुमार की तरह पाला गया। आपका ऋण मैं कैसे चुका सकता हूं? मैं धीर को कुशल पूर्वक भेज दूंगा। मुझे आज्ञा दीजिये।"

शूर ने घोड़े पर श्रीपुत्र के राज्य में पहुँच कर कहा—"राजन! आपकी दी हुई यह अंगूठी ले लीजिये।" यह कहते उसने राजा को अंगूठी लौटा दी।

"इसके पूर्व मैं ने एक व्यक्ति को बंदी बनाया। क्यों कि उसने मेरी अंगूठी की बात नहीं कही। क्या वह तुम नहीं हो?" श्रीपुत्र मे पूछा।

"नहीं, वह धीर है। हम दोनों का रूप एक समान है।" शूर ने उत्तर दिया।

श्रीपुत्र ने धीर को मुक्त किया। वह घोड़े. पर अपने पिता के पास लौट गया। शूर और मालावती के साथ श्रीपुत्र ने वैभव सहित विवाह किया।

# नयी बहू

पुराने जमाने में चीन देश में भी सास और बहू के बीच झगड़ा जोरों पर था। बहुओं पर अगर सास नाराज़ हो जाती तो उन्हें नाना प्रकार की यातनाएँ ही नहीं देती, बल्कि उनकी जान भी ले लेती थी।

एक पहाड़ी प्रदेश में एक परिवार था। उस परिवारवाले अपने दूसरे पुत्र के साथ शादी करने एक युवती को ले आये। होनेवाली बहू के साथ सास खूब कसकर काम लेती थी।

उस घर के पिछवाड़े में एक अजीब ढंग का पेड़ था। उसके पत्ते कभी पकते न थे, याने पीले न पड़ते थे। हर दिन सवेरे उस पेड़ से गोल-गोल तांबे के टिकिये गिरते थे। उन तांबे के टिकियों के बीच छेद बनाकर, उन्हें पैसों के रूप में इस्तेमाल करना चीनीवासियों का रिवाज़ था।

पेड़ से गिरनेवाले तांबे के टिकियों में छेद बनाने का काम नयी बहू को सौंपा गया। वह बड़ा मुश्किल का काम था। हथौड़ी चला चलाकर उसके हाथ में छाले पड़ गये। रात-भर वह पैसे तैयार करती और दिन भर घर का काम देखती। उन सभी कामों में मुश्किल का काम था– पहाड़ पर चढ़कर कुल्हाड़ी से लकड़ी काट लाने का। पहाड़ पर बड़ी संर्दी भी पड़ती थी। उसके पास ओढ़ने को ऊनी दुपट्टा तक न था।

इन तक़लीफ़ों से तंग आकर वह पहाड़ पर बैठे रोया करती। एक दिन जब वह अकेली बैठे रो रही थी, तब एक बूढ़ा उधर से आ निकला और उससे पूछा–"बेटी, तुम रोती क्यों हो?" उस युवती ने अपनी सारी तकलीफ़ें बूढ़े को सुनायीं।

"तुमने उस पहाड़ के छोर पर पत्थर की बनी मनुष्य की मूर्ति देखी? उस आदमी का हाथ तुम्हारी सास के पिछवाड़ेवाले पेड़ को दिखाता है। अगर तुम उस हाथ को तोड़ दोगे तो तांबे के टिकिये गिरानेवाला पेड़ सूखकर मर जायगा। तुम्हारी आधी तकलीफ़ें दूर हो जायेंगी।" बूढ़े ने समझाया।

वह युवती खुशी से नाच उठी। पत्थर की मूर्ति की खोजकर उसके हाथ को तोड़ दिया। घर लौटकर उसने देखा कि पेड़ सूखकर मरने की हालत में है।

सास ने भांप लिया कि यह होनेवाली बहू का काम है–"पापिन, तुमने रुपये देनेवाले पेड़ को मार डाला। मैं तुझे मार डालती हूँ।" यह कहते एक बड़ा चाकू लिये सास बहू की ओर दौड़ी। बहू घबराकर पहाड़ पर भाग गयी। सास ने बड़ी दूर तक उसका पीछा किया, लेकिन वह थककर लौट आयी।

बहू की समझ में न आया कि अब क्या करना चाहिए। घर लौटेगी तो सास उसकी जान लेगी। इसलिए पहाड़ पर ही रहने का निश्चय किया और पत्तियां खाकर भूख मिटाने लगी। उन पत्तों को खाने से उसके शरीर में एक विचित्र परिवर्तन हुआ। उसकी देह पर सफ़ेद पंख उग आये, उनकी मदद से वह उड़ने भी लग गयी थी।

पहाड़ के नीचे एक मंदिर के सामने एक ऊँचा साल वृक्ष था। होनेवाली बहू ने उस पेड़ पर अपना निवास बनाया। नयी कोंपलें खाकर दिन काटने लगी। मंदिर के अहाते में एक मठ था। उसमें एक भिक्षु था। उसने मनुष्य की आकृति को पेड़ पर उतरते देखा। उसने यह जानना चाहा कि वह आकृति क्या है? इसलिए उसने बढ़िया खाना लाकर साल वृक्ष के

नीचे चबूतरे पर रख दिया और वह थोड़ी दूर पर जा छिपा।

होनेवाली बहू मानवों के भोजन के लिए तरसती थी। उसने देखा कि आस-पास में कोई नहीं है। इसलिए चबूतरे पर उतरी और ताबड़-तोड़ खाना खाने लगी।

आड़ में छिपे यह सब देखनेवाले भिक्षु को लगा कि वह सफ़ेद आकृति कोई पिशाच होगी। वह पिशाचों के मंत्र पढ़ते सामने आया और पूछा–"ऐ पिशाच, तुम कौन हो?"

होनेवाली बहू घबराकर उड़ने की कोशिश करने लगी, लेकिन उड़ नहीं सकी। क्योंकि मानवों का आहार खाने से उसके उड़ने की ताक़त जाती रही। इसलिए उसने रोते हुए भिक्षु से आदि से अंत तक अपनी सारी राम कहानी कह सुनायी।

वह बातें कर ही रही थी कि उसके शरीर पर से सारे पंख निकल गये और वह मामूली औरत बनी।

"तुमको डरने की कोई ज़रूरत नहीं, मैं देखूंगा कि तुम्हारी सास के द्वारा तुम्हें कोई तक़लीफ़ न हो।" यह कहकर भिक्षु उस युवती को ले उसकी सास के घर गया। सास को थोड़ी दूर ले जाकर समझाया–"तुम अपनी बहू के साथ अच्छा व्यवहार करो। वह खुद भली है, लेकिन ज्यादा सताओगी तो वह पिशाच बन जायगी। उसके आकाश में उड़ते मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

सास पिशाचों के नाम से ही डरती थी। इसलिए होनेवाली बहू को घर से निकालने की उसकी हिम्मत न हुई, उसने अच्छा मुहूर्त देख अपने दूसरे लड़के के साथ उसकी शादी की, तब से वह अपनी बहू से डरने भी लगी।

# यशस्कर का फ़ैसला

एक दिन यशस्कर अदालत का कार्य समाप्त कर भोजन करने उठ ही रहा था कि एक ब्राह्मण ने आकर राजा के दर्शन की इच्छा प्रकट की ।

"महराज ने आज का कार्य पूरा किया है । कल आकर उनसे निवेदन कर सकते हो!" द्वारपाल ने ब्राह्मण से कहा ।

राजा ने यह बात सुनी । रसोइये को थोड़ी देर प्रतीक्षा करने का आदेश दिया । तब ब्राह्मण के आने का कारण पूछा ।

ब्राह्मण ने बड़े ही दुखपूर्ण स्वर में कहा—"महराज! मैं ने कई देशों का भ्रमण कर सौ सोने के सिक्के कमाये । यह सोचकर अपने इस देश में लौट आया कि यहाँ की अराजकता दूर हो गयी है । आपकी कृपा से रास्ते में मुझे चोरों से कोई तक़लीफ़ न हुई । कल शाम को मैं लवनोत्स नामक गाँव में पहुँचकर एक पेड़ के नीचे लेटकर सो गया । सुबह उठकर देखता क्या हूँ, मेरे सिक्कोंवाली थैली कुएँ में गिर गयी है । उस कुएँ पर लताएँ इस तरह फैली थीं, कि मुझे कुएँ का पता न चला । मेरा सर्वस्व खो गया था और मैं कुएँ में उतरने से डरता भी था । इसलिए लाचार होकर जब मैं रो रहा था, तब एक आदमी ने आकर पूछा—"मैं तुम्हारी सिक्कोंवाली थैली कुएँ से निकालकर देता हूँ, बदले में तुम मुझे क्या दोगे?" मैं ने कहा—"जितने सिक्के तुम चाहते हो, उतने मुझे दे दो ।" उस आदमी ने कुएँ से थैली निकाली । मुझे केवल दो सिक्के दिये । मैं ने इस पर आपत्ति उठायी तो वहाँ के लोगों ने मुझे दुतकार कर कहा—"यशस्कर के राज्य में समझौते का पालन होना ही चाहिये ।" मैं ने उदारता दिखायी तो

मेरे साथ बड़ा अन्याय हो गया है। यदि आपके शासन में ऐसा ही अन्याय होता है तो मुझे आपके घर के सामने अनशन करना पड़ेगा।"

"वह आदमी कौन है, जिसने तुम्हारी थैली निकाल कर दी?" राजा ने पूछा।

"मैं केवल उसके चेहरे को पहचान सकता हूँ।" ब्राह्मण ने जवाब दिया।

"तुम्हारी फ़रियाद का फ़ैसला कल करूँगा। आज तुम मेरे साथ भोजन कर यहीं पर आराम करो।" राजा ने कहा।

दूसरे दिन राजा का आदेश पाकर लवनोत्स के सभी लोग वहाँ पर जमा हुए। ब्राह्मण ने उसे धोखा देनेवाले व्यक्ति को पहचाना। उस व्यक्ति ने भी ठीक वे ही बातें कहीं जो ब्राह्मण ने कही थीं।

वहाँ पर जमा हुये लोगों की समझ में न आया कि मुद्दई और मुद्दालेह के बयान एक से हैं, तब फ़ैसला कैसे होगा!

लेकिन राजा ने फ़ैसला सुनाया– "ब्राह्मण को अट्ठानवें सिक्के देकर मुद्दई को दो सिक्के लेने चाहिये।"

इस पर कुछ लोगों ने आपत्ति उठायी। तब राजा ने उन्हें यों समझाया–"कभी कभी न्याय और अन्याय एक तरह ही होते हैं। उन्हें हमें अलग करके देखना चाहिये। इस ब्राह्मण ने यह नहीं कहा कि तुम जितना दोगे, उतना लूँगा। उसने यही कहा था कि 'तुम्हें जितने पसंद हैं, उतने ही दो।' लालची ने क्या किया, उसे जितने पसंद थे, उतने सिक्के रख लिये और जितने पसंद न थे उतने सिक्के ब्राह्मण को दिये। इस तरह उसने नियम का उल्लंघन किया है।"

यशस्कर ने इस तरह के अनेक मुक़द्दमों का बड़ी कुशलता के साथ फ़ैसला कर यह ख्याति प्राप्त की कि उसने इस पृथ्वी पर फिर से कृतयुग का प्रारंभ किया है।

# शिकायत

पुराने जमाने में प्रश्या देश पर एक बादशाह राज्य करता था। वह बड़ा ही होशियार और अक़्लमंद था। उसके पास फारूस और कमाल नामक दो सलाहकार थे।

फारूस ने यह नाम कमाया कि वह कमाल से भी ज्यादा प्रज्ञाशाली है। इसलिए कमाल फारूस से मन ही मन जलता था। फारूस ने बादशाह की तारीफ़ ही नहीं पायी, बल्कि कई इनाम भी पाये थे।

कमाल के दिल में यह विचार पैदा हुआ कि फारूस को बादशाह के दरबार से भगा देना चाहिए। उसके मन में यह विश्वास जम गया कि फारूस को हटा देने पर उसकी प्रतिष्ठा होगी और बादशाह हर बात में उसी की सलाह पर निर्भर रहेगा।

फारूस की न केवल बादशाह इज्ज़त करता था, बल्कि सभी दरबारी भी उसका आदर करते थे। क्योंकि वह दयालू, सज्जन और परोपकारी था। इसलिए कोई कुतंत्र करके उसे हटाना मुश्किल था। अतः कोई अच्छा मौक़ा पाकर बड़ी सावधानी से फारूस के विरुद्ध बादशाह के मन में संदेह पैदा करना चाहता था।

ऐसे मौक़े की खोज में कमाल बैठा ही था कि एक दिन ऐसा मौक़ा भी आया।

राजभट एक दिन एक क़ैदी को दरबार में खींचकर ले आये। उस पर एक हत्या का आरोप लगाया गया था। बादशाह ने मुक़द्दमे की सुनवाई करके उस क़ैदी को मौत की सज़ा सुनायी।

वह असहाय क़ैदी निराशा में भर उठा और वह बादशाह को गाली देने लगा। वह अपनी जान की आशा छोड़ चुका

था, इसलिए उसे डर किस बात का था? क़ैदी की बातें बादशाह को साफ़ सुनायी न दीं। "क़ैदी क्या कहता है, फारूस?" बादशाह ने अपने पास ही बैठे फारूस से पूछा।

फारूस ने खड़े होकर कहा—"जहाँपनाह! वह कहता है, जो आदमी दीनों पर दया करके उन्हें क्षमा कर देता है। भगवान उनकी रक्षा करते हैं। वह निर्दोष है और उसका शिरच्छेद एक पल में किया जा सकता है, लेकिन इसका पाप सदा बादशाह का पीछा करता रहेगा।"

बादशाह को उस क़ैदी पर रहम आ गयी और बड़ी सहृदयता से उसे क्षमा कर जान से छोड़ दिया।

अब कमाल को बड़ा अच्छा मौक़ा मिला। बादशाह से फारूस पर शिकायत करने के ख्याल से कमाल ने उठकर कहा—"हुज़ूर! मेरा यह शरीर आपका नमक खाकर पला है। मुझ जैसा व्यक्ति आपके सामने कभी झूठ नहीं बोल सकता। उस क़ैदी ने आपको नाना प्रकार की गालियाँ दीं और ईश्वर के प्रतीक आपका अपमान भी किया। मेरी प्रार्थना है कि उसकी जीभ कटवा दी जाय।"

कमाल की बातें सुनकर बादशाह का चेहरा लाल हो उठा। उसने गरजकर कमाल से कहा—"तुमने जो सत्य कहा, उससे भी बढ़कर फारूस का झूठ मुझे प्रिय है। उसने सहृदयता के वशीभूत हो झूठ कहा है। तुमने ईर्ष्या और द्वेष में आकर जो सत्य कहा, वह मुझे बिलकुल पसंद नहीं है।"

बादशाह की बात सुनकर लगा कि कमाल के सर पर मानों गाज गिर गयी हो। वह अपना सर झुकाकर दरबार से बाहर चला गया और दूसरे ही दिन उस देश को छोड़ कहीं चला गया।

# राजकुमार

छत्रपुर के राजा सुधन्व ने बचपन में ही अनेक देशों का भ्रमण किया और अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। उसके साथ श्रीपुत्र नामक एक दूसरे राजकुमार ने भी भ्रमण किया। ये दोनों बचपन में जुडवें भाइयों की भांति आपस में प्रेम से रहते थे। बड़े बड़े वीर और बलवानों को हरा देते थे। उनका नाम चारों तरफ़ फैल गया। जवान होते ही दोनों ने सुंदर कन्याओं के साथ विवाह भी किये। उनके राजतिलक भी हुये। दोनों अपने अपने राज्यों में राज्य करते काफ़ी मशहूर भी हुये। श्रीपुत्र का राज्य छत्रपुर से सैकड़ों मील दूरी पर था।

छत्रपुर के राजा के बहुत समय तक कोई संतान न हुई। एक बार वे शिकार खेलने एक जंगल में गये। वहाँ पर एक किरात ने राजा का हाथ देखकर कहा—"राजन, एक मछली के प्रभाव से आपके एक पुत्र होगा, लेकिन आप तीन पुत्रों का पालन करेंगे।"

किरात की बातें राजा सुधन्व की समझ में न आयीं और न उन्होंने उसकी बातों की परवाह ही की। लेकिन किरात की बात सच्ची साबित हुई। राजा के शिकार से लौटने के पहले ही मछुओं ने पाँच रंगोंवाली एक मछली लाकर अंत.पुर में दी। वह मछली बड़ी अजीब थी। इसलिए रसोइन ने उसे पकाकर रानी को खिलाने के पहले उसने चखकर स्वाद लिया, तब रानी को परोसा। रानी ने थोड़ा खाकर बाक़ी छोड़ दिया। उसे एक दासी ने खा लिया। उस मछली को खानेवाली रानी, रसोइन और दासी तीनों गर्भवतियाँ हुईं और दस महीने के बाद एक ही दिन तीनों के प्रसव हुये।

रूपचंद

दीजिये।" राजा ने आदेश दिया। राजा ने उन लड़कों के नाम क्रमशः धीर, वीर और शूर रखा।

जब तीनों लड़के जवान हुये, तब राजा सुधन्व ने उन्हें बुलाकर कहा-"तुम में से एक मेरे बाद गद्दी पर बैठेगा। इसलिए तुम्हारी शक्ति एवं सामर्थ्य का मुझे पता लगना चाहिये। तुम तीनों हमारे घुड़साल में जाओ। अपने पसंद के घोड़ों को ले देशों का भ्रमण करते हुये ऐसी चीज़ें ले आओ, जिन्हें मैं ने आज तक देखी न हों।"

तीनों राजकुमारों ने आपस में सलाह-मशविरा किया। धीर और वीर को राजा की इच्छा पसंद न आयी। पर शूर ने कहा-"राजा का कहना उचित ही है। दुनियादारी का अनुभव पाने के लिए हमें भ्रमण करना होगा!"

वे तीनों अच्छे घोड़ों को चुनकर लगातार कई दिनों तक यात्रा करके आखिर एक विचित्र जंगल में पहुँचें। उसमें एक जामून के पेड़ पर चाँदी के रंग के फल लगे थे। धीर ने झट थोड़े फल तोड़ लिये और कहा-"पिताजी ने ऐसे फल देखे न होंगे। इन्हें ले जाकर उन्हें सौंप दूंगा और मैं युवराज बन बैठूंगा।"

तीनों के एक साथ लड़के पैदा हुये देख सब लोग अचरज में आ गये। लेकिन सब को और भी आश्चर्य इसलिए हुआ कि तीनों लड़के देखने में एक से थे। राजा ने कहा-"जब तक मैं अपनी आँखों से तीनों बच्चों को न देखूंगा तब तक मैं यक़ीन नहीं कर सकता।" यह कहकर राजा ने तीनों लड़कों को मंगवाया। वे बच्चे अदल-बदल हो गये।

"अब इन तीनों लड़कों को निश्चय के साथ अलग करना संभव नहीं। इसलिए इन तीनों लड़कों को मैं ही पालता हूँ। लेकिन तीनों को तीन तरह के कपड़े पहनवा

यह कहकर वह अपने घोड़े पर सवार हो राजधानी की ओर चल दिया ।

वीर को इस बात की चिंता हुई कि उसे पहले यह विचार क्यों न आया । फिर भी यह सोचकर वह आगे बढ़ा कि आगे उसे और विचित्र चीज़ें शायद दिखायी दें । शूर भी उसके साथ आगे बढ़ा ।

कुछ दिन की यात्रा के बाद वे दोनों एक और विचित्र वन में पहुँचे । वहाँ पर एक पेड़ से सोने के रंग के कैथे लटक रहे थे । वीर ने कहा–" पिताजी ने ऐसे कैथे न देखे होंगे । चाँदी के जामूनों से भी ये फल ज्यादा विचित्र मालूम होते हैं । मैं ज़रूर राजा बन जाऊंगा ।" यह कहकर वह भी अपने घोड़े पर सवार हो चला गया ।

इसके बाद शूर अकेला आगे बढ़ा । वह बहुत दिन तक यात्रा करके एक विचित्र जंगल में जा पहुँचा । वहाँ का हर पेड़, पौधा यहाँ तक कि दूब हीरों जैसे चमक रहा था । उस जंगल के बीच सोने का एक महल था । उसकी दीवारों पर नवरत्न जड़े थे । महल के सामने एक बड़ी बूढ़ी बैठी थी । उसके हाथ में एक तलवार थी ।

शूर ने उसे देखा, पर बूढ़ी के देखने के पहले ही वह एक झाड़ी के पीछे छुप

गया। उसे लगा कि ऐसे रत्नोंवाला जंगल उसके पिता ने कभी देखा न होगा। कोई छोटी-सी टहनी या डाल तोड़कर ले जावे। यह सोचकर उसने ज्यों ही झाड़ी पर हाथ रखा त्यों ही वह झाड़ी पीड़ा से कराह उठी। एक दूब को तोड़ने के ख्याल से उसने उसे हाथ से पकड़ लिया। तब वह दूब दुर्बल स्वर में बोली—"शूर, मुझे न तोड़ो। तुरंत घर लौटो। यहाँ पर तुमने जो कुछ देखा, उसे किसी से न बताओ। तुम्हारे पिता ने देश का भ्रमण करते समय जो कपड़े पहने थे और जो तलवार धारण की थी और जिस घोड़े पर आये थे, उस पर चढ़कर फिर यहाँ आ जाओ। तब तुम्हारा भला होगा।"

शूर का उन बातों पर विश्वास जम गया। वह उस भयंकर बूढ़ी की आँख बचाकर जंगल से बाहर आया और अपने घोड़े पर घर की राह ली।

इस बीच में धीर ने घर लौटकर चाँदी के जामून राजा को दिखाकर कहा—"मैं दुनिया भर में विचित्र वस्तु लाया हूँ।"

"बेटा, तुम बहुत दूर नहीं गये। चाँदी के जामूनवाले पेड़ हमारे राज्य की सीमा से थोड़ी दूर पर ही हैं। मैं बचपन में अपने दोस्त के साथ रोज सवेरे इस पेड़वाले जंगल तक सैर करने जाता था।" राजा की ये बातें सुनकर धीर हताश हो गया।

वीर का लाया सोने का कैथ देखकर भी राजा को आश्चर्य न हुआ। उसने कहा—"बेटा, मैंने तुम लोगों को दुनिया देख आने भेजा। पर तुम थोड़ी ही दूर जाकर लौट आये। एक समय था, जब मैं अपने दोस्त के साथ हर शाम को सैर के लिए वहाँ जाया करता था।" राजा की ये बातें सुनकर वीर की आशाओं पर पानी फिर गया। यही नहीं, यह सोचकर

वे दोनों राजकुमार घबरा गये कि शूर इन से भी विचित्र वस्तु लाकर कहीं राजा न बन बैठे ।

लेकिन शूर खाली हाथ लौट आया। उसने राजा से कहा–"पिताजी! ऐसी विचित्र कोई वस्तु मुझे दिखायी न दी जिसे आपने देखी न हो। लेकिन मैं फिर रवाना होना चाहता हूँ। आपने बचपन में जिन पोशाकों, तलवार और घोड़े का उपयोग किया, उनकी मुझे जरूरत है।"

राजा ने कहा–"मेरे बचपन की पोशाकें फट गयी हैं। तलवार में जंग लग गयी है। घोड़ा इतना बूढ़ा हो गया है कि वह चलने की स्थिति में नहीं है।" फिर भी शूर ने न माना। राजा ने वे सारी चीजें शूर को सौंप दीं।

शूर ने फटी पोशाकें पहन लीं। तलवार की जंग धो डाली। इसके बाद घुड़साल में जाकर बूढ़े घोड़े को देखा। जब वह घोड़े को उठाने लगा, तब वह हिनहिनाया। उस हिनहिनाहट में मानव की बोली में ये शब्द सुनायी पड़े–

"मुझे अंगारे खिला दो।"

शूर चकित हो उठा। उसने लकड़ी जलाकर अंगारे घोड़े के मुँह में रख दिये।

झट घोड़ा उठ खड़ा हुआ। उसका शरीर रेशम की तरह चमकने लगा। उसने एक बार अंगड़ाई ली और खुरों से जमीन खुरेदने लगा।

शूर खुशी से उछलकर उस पर सवार हो गया। दूसरे ही क्षण वह घोड़ा हवा से बात करने लगा। एक घड़ी के अन्दर घोड़ा रत्नोंवाले जंगल में पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर घोड़े ने कहा–"शूर, अब तुमको बहुत सतर्क होकर काम करना होगा। इस जंगल के बीच बैठी बूढ़ी भयंकर जादूगरनी है। उसकी आँखों में पड़ जाओगे तो तुम्हें जान से हाथ धोना

पड़गा। पल-भर में तुमको उसक हाथ की तलवार छीनकर उसका सर काट देना होगा। उसने अपने जादू के प्रभाव से यहाँ के राजा, उसकी पुत्री तथा उसके परिवार को पेड़ और पौधों के रूप में बदल दिया है। यदि वह मर जायगी तो ये लोग अपने पूर्व रूप को प्राप्त करेंगे।"

शूर ज़रा भी घबराये बिना जादूगरनी के पीछे पहुँचा। झट उसके हाथ की तलवार खींचकर अपनी तलवार से उसका सर काट डाला।

दूसरे ही क्षण सारा जंगल गायब हो गया। सब जगह मनुष्य ही मनुष्य दिखायी देने लगे। उनमें राजकुमारी और राजा भी थे। राजा ने शूर को देख पूछा-"बेटा, तुम कौन हो? तुमने जो पोशाकें पहनी हैं, वे मेरे बचपन के दोस्त की हैं। ये तुमको कैसे मिलीं?" जब उस राजा को यह मालूम हुआ कि शूर का पिता सुधन्व है तब उसने शूर से गले लगाकर कहा- "मेरा नाम श्रीपुत्र है। क्या तुम्हारे पिता ने तुम्हें नहीं बताया? बचपन में हम दोनों प्राण-मित्र थे। तुमने मुझे और मेरे राज्य को खतरे से बचाया और मेरे प्राण मित्र के पुत्र भी हो। यदि तुम मेरी पुत्री मालावती के साथ विवाह करोगे तो मैं बहुत ही खुश हो जाऊँगा।"

शूर ने जब मालावती को देखा, तब उसे लगा कि वह अगर उसकी पत्नी बन जाय तो क्या ही अच्छा हो! फिर भी उसने तुरंत स्वीकृति न देकर कहा-"मैं अपने पिता की अनुमति लेकर फिर लौट आऊँगा।" इस पर श्रीपुत्र ने प्रसन्न हो अपने हाथ की अंगूठी निकालकर शूर के हाथ देते हुये कहा-"तुम यह अंगूठी अपने पिता को दिखाओ और उनसे कह दो कि यह अंगूठी देनेवाले ने अपनी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ करने की इच्छा प्रकट की है।"

शूर अपने घोड़े पर सवार हो अपने पिता के पास लौट आया। श्रीपुत्र की अंगूठी दिखाकर कहा–"इस अंगूठी को देनेवाले व्यक्ति ने अपनी पुत्री का विवाह मेरे साथ करने की इच्छा प्रकट की है।"

सुधन्व को यह बात बड़ी अच्छी लगी कि अपने बचपन के दोस्त की पुत्री से अपने पुत्र का विवाह हो जाय। लेकिन उसे लगा कि इन तीनों पुत्रों में से अपने असली पुत्र का पता लगे तो उसी के साथ श्रीपुत्र की लड़की का विवाह करना उत्तम होगा। इसीलिए राजा सुधन्व ने शूर से कहा–"शादी की बात मैं सोचकर बताऊंगा।" यह कहकर शूर को भेज दिया। तब जंगल के उस किरात को बुला भेजा।

किरात से राजा ने कहा–"तुमने मेरा हाथ देख जो कुछ कहा, वह अद्भुत है। मैं तीन लड़कों को पाल रहा हूँ। इनमें से एक ही मेरा असली पुत्र है। एक रसोइन का लड़का है और तीसरा दासी का पुत्र है। उनके हाथ देखकर क्या तुम यह बता सकते हो कि कौन मेरा असली पुत्र है? क्यों कि मुझे इन तीनों में से एक को युवराज बनाना है।"

किरात ने तीनों राजकुमारों के हाथ देखकर राजा से एकांत में बताया–"धीर नामक युवक आपका असली पुत्र है। शूर दासी का पुत्र है। वीर रसोइन का लड़का है।"

राजा हताश हो गया। तीनों में से आलसी और अयोग्य युवक उसका असली पुत्र है? सब से होशियार और योग्य युवक दासी-पुत्र है। फिर भी अपने ही लड़के को युवराज बनाना होगा। इसलिए राजा ने रात के समय गुप्त रूप से धीर को बुलाकर कहा–"घुड़साल में मेरे बचपन का घोड़ा है। उसकी मालिश कराकर खूब दाना खिलाओ। उस पर सवार हो वहाँ जाओ, जहाँ वह तुमको ले जायगा।"

"उस मरियल घोड़े पर?" धीर ने आश्चर्य प्रकट किया।

"हाँ, बेटा! वही हमारे शूर को बहुत दूर ले गया था।" राजा ने समझाया।

धीर ने घुड़साल में जाकर देखा। वह घोड़ा उठने की हालत में न था। "उठोगे कि नहीं?" यह कहते धीर उसे पीटने लगा। तब शूर ने आकर कहा–"उसे पीटते क्यों भाई?"

"पिताजी ने मुझ से कहा है कि मैं इस पर चढ़कर जाऊँ! लेकिन यह खड़ा भी नहीं होता।" धीर ने कहा। शूर ने समझ लिया कि मालावती के साथ उसका विवाह करना राजा को पसंद नहीं है। यह सोचकर उसने धीर से कहा–"तब तो तुम उसे अंगारे खिलाओ।"

धीर ने घोड़े को अंगारे खिलाये। घोड़ा उठ खड़ा हुआ। धीर उस पर सवार हो घड़ी भर में श्रीपुत्र के नगर में पहुँचा। श्रीपुत्र ने उसे देख शूर ही समझा और पूछा–"तुम लौट आये बेटा! क्या तुम्हारे पिता ने तुम्हारी शादी की स्वीकृति दी? मेरी अंगूठी लौटा दो।"

राजा पांडु अपनी कुंती और माद्री नामक दो पत्नियों के साथ अरण्यों में विहार करता था। शिकार खेलने में भी अपना समय बिताया करता था। एक दिन राजा पांडु ने मिथुनवाले दो हिरणों को मारा। वास्तव में वे हिरण न थे, बल्कि किंदम नामक मुनि और उसकी पत्नी हिरणों का रूप धरकर काम-सुख का अनुभव कर रहे थे। यह बात राजा पांडु को मालूम न थी। बाण से घायल होकर मरते वक़्त मुनि ने राजा पांडु को शाप दिया–"तुम भी जब अपनी पत्नियों के साथ संगम करोगे तब तुम्हारी भी मृत्यु होगी।"

राजा पांडु को इस बात का बड़ा दुख हुआ कि उसने मुनि-दंपति को अकारण ही मार डाला है। तब तक राजा के भी कोई संतान न थी। भविष्य में भी मुनि के शाप के कारण वह संतान से वंचित हो गया। इस पर राजा पांडु ने अपनी पत्नियों को बुलाकर उनसे कहा–"मैं सन्यास लेकर अरण्य में ही वास करूँगा। तुम दोनों हस्तिनापुर में जाकर भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर तथा अन्य लोगों को यह समाचार सुनाओ।"

"हम आपको छोड़कर कहाँ और कैसे रह सकती हैं? हम सब मिलकर एक साथ तपस्या करेंगे और हमारी आयु के पूरा होने पर पुण्यलोक की प्राप्ति करेंगे। कुंती और माद्री ने राजा पांडु से निवेदन किया। इस बात को राजा पांडु न माने

६. पांडवों का जन्म

राजा पांडु ने अपनी पत्नियों और मुनियों के साथ मिलकर तपस्या करना शुरू किया।

तपस्या करते राजा पांडु के मन में एक संदेह पैदा हुआ कि पुत्रों के विना कठोर तपस्या करने पर भी मोक्ष की प्राप्ति न होगी। इसलिए उसके समान स्तर के व्यक्ति अथवा उस से भी उत्तम व्यक्तियों द्वारा उसकी पत्नियां पुत्र पैदा करे, तो वे उसके क्षेत्रज पुत्र होंगे। आखिर वह भी तो एक क्षेत्रज पुत्र है। यह सोचकर राजा पांडु ने अपना विचार कुंती के सामने प्रकट किया। दूसरों के द्वारा पुत्र पैदा करने को कुंती ने पहले स्वीकार नहीं किया, लेकिन राजा पांडु ने उसे अनेक प्रकार से समझाकर मनवाया।

तो वहीं पर देह-त्याग करने का भी उन दोनों ने निश्चय किया।

राजा पांडु अपनी पत्नियों को अपने साथ रखने को तैयार हो गया और उसने वानप्रस्थ करने का निश्चय किया। उन तीनों ने अपने क़ीमती वस्त्र और आभूषणों को त्याग कर वल्कल पहने। अपने सब परिचारकों को हस्तिनापुर भेज दिया। वे तीनों देशाटन करते नागशत पर्वत, हिमवंत, गंधमादन, इंद्रद्युम्न ह्रद, हंस कूट, आदि प्रदेशों में घूमते कुछ दिन उन स्थलों पर ठहरें और अंत में शतश्रृंग पर्वत पर पहुंचे। वहां पर अनेक मुनि तपस्या कर रहे थे।

कुंती ने अपने पति से कहा—"मुझे बचपन में मुनि दुर्वासा ने एक मंत्र का उपदेश दिया है। यदि मैं उस मंत्र का जाप करूं तो मैं जिस देवता का स्मरण करूंगी, वह मुझे पुत्र प्रदान करेगा। आप ही बताइये, मैं किस देवता का स्मरण करूं?"

"बड़ी अच्छी बात है। कौरव-वंश का जो राजा होगा, उसे धर्मज्ञ होना ज़रूरी है।

इसलिए तुम सब से पहले धर्म देवता का स्मरण करो।" राजा पांडु ने कुंती को समझाया।

कुंती ने उसी प्रकार यम का स्मरण कर उन को प्रत्यक्ष कराया और उनके अनुग्रह से गर्भवती हो गयी। गांधारी इसके पहले एक साल से गर्भवती थी। लेकिन गांधारी अभी गर्भवती ही थी, कुंती के एक पुत्र पैदा हुआ। आश्रमवासी मुनियों ने इस शिशु का युधिष्ठिर नामकरण किया।

इसके बाद राजा पांडु ने एक बलवान पुत्र की इच्छा प्रकट की। इस पर कुंती ने वायु देवता द्वारा भीम का जन्म दिया। भीम के पैदा होते ही एक विचित्र घटना घटी। कुंती उस शिशु को अपनी गोद में लिये हुए बैठी थी। उस वक़्त उधर एक शेर आ निकला। शेर को देख कुंती डर गयी और अपनी गोद के शिशु की बात भूलकर झट उठ खड़ी हो गयी। इससे वह शिशु एक पत्थर पर जा गिरा। शिशु के गिरते ही वह पत्थर टूटकर चकना चूर हो गया। इसे देख वहाँ के लोग चकित हो गये। इस घटना के बाद ही उन लोगों ने उस शिशु का भीमसेन नामकरण किया।

राजा पांडु के मन में एक असाधारण पुत्र को जन्म देने की कामना पैदा हुई। उसकी इच्छा पर कुंती ने इंद्र के द्वारा अर्जुन का जन्म दिया। हस्तिनापुर में गांधारी ने सौ पुत्रों का जन्म दिया तो शतश्रृंग में कुंती ने तीन पुत्रों का जन्म दिया। राजा पांडु ने कुंती के गर्भ से और भी पुत्रों को जन्म दिलाना चाहा, लेकिन कुंती सहमत नहीं हुई।

एक दिन माद्री ने राजा पांडु से कहा—"कुंती ने मंत्र के प्रभाव से पुत्रों का जन्म दिया है, मैं भी कुंती से किसी बात में कम नहीं हूँ। मैं संतान से वंचित क्यों रहूँ? अगर कुंती मुझे उस मंत्र का उपदेश दे तो मैं भी पुत्रवती बन सकती हूँ। आप कुंती को समझाकर मेरी इच्छा की पूर्ति कराइये।"

राजा पांडु ने माद्री की इच्छा कुंती के सामने प्रकट की। कुंती ने माद्री को उस मंत्र का उपदेश दिया। माद्री ने अश्वनी देवताओं की आराधना कर उनके ज़रिये नकुल और सहदेव नामक दो जुड़वें बच्चों का जन्म दिया। माद्री उस मंत्र के प्रभाव से और भी बच्चों का जन्म देती, लेकिन माद्री ने एक ही साथ दो देवताओं की आराधना की थी, इस पर रूठकर कुंती ने दुबारा माद्री को मंत्र का उपदेश देने से इनकार किया।

एक एक साल के अंतर से पैदा हुये उन बच्चों के लाड़-प्यार में राजा पांडु अपने दिन सुखपूर्वक बिताने लगा। आश्रम वासियों ने उन बच्चों के पालन-पोषण में उत्साह दिखाया। राजा वसुदेव ने अपने भानजों के लिए अपने पुरोहित कश्यप के द्वारा सोने के आभूषण, रेशमी वस्त्र, खिलौने और अन्य चीज़ें भी भेजीं। राजा पांडु ने समय पर अपने पुत्रों का उपनयन कराकर वहाँ के ऋषियों द्वारा वेदाध्ययन भी कराया।

कुछ वर्ष बीत गये। एक बसंत ऋतु में कुंती ब्राह्मणों के लिए भोज का प्रबंध करने में निमग्न थी। तब माद्री को अकेले पाकर उस पर राजा पांडु मोहित हुआ और उससे संगम कर शाप के कारण मर गया।

अपने मृत पति से लिपट कर रोनेवाली माद्री को देख कुंती और शातश्रृंग के मुनि भी वहाँ आ पहुँचे। वे इस घटना को देख चकित हुये। माद्री ने कुंती को निकट बुलाकर राजा पांडु की मृत्यु का कारण बताया।

"ओह, माद्री! मैं जानती थी कि राजा को मुनि ने शाप दिया है। इसलिए मैं बहुत सावधान रहा करती थी। तुमने ऐसा क्यों होने दिया? अब हम क्या कर सकती हैं? मैं बड़ी पत्नी हूँ, इसलिए मैं पति के शव के साथ सहगमन करूँगी। तुम बच्चों का भार संभालो।" कुंती ने विलाप करते हुये कहा।

माद्री ने रोते हुए कहा-"मैंने उनसे बचने की बड़ी कोशिश की, लेकिन उनको रोक न पायी। मैं अपने पति के प्राण बचा न सकी, तो इन बच्चों के प्राण कैसे बचा सकती हूँ? इस लोक में पति को सुख न दे सकी, शायद परलोक में उन्हें सुख पहुँचा सकूँ। इसलिए मैं ही पति के साथ सहगमन करूँगी-" ये शब्द कहकर माद्री ने कुंती से विदा ली और पति की चिता पर वह भी जल कर भस्म हो गयी।

इसके बाद शतश्रृंग के निवासी मुनि कुंती और पांडवों को साथ लेकर, माद्री और राजा पांडु की अस्तियों को ले हस्तिनापुर पहुँचे और सारी बातें भीष्म, धृतराष्ट्र तथा अन्य लोगों को सुनायीं।

राजा पांडु की मृत्यु का समाचार सुनकर भीष्म और धृतराष्ट्र बहुत दुखी हुए। धृतराष्ट्र ने विदुर को आदेश दिया कि

मृत व्यक्तियों की परलोक संबन्धी क्रियायें करवायें। माद्री तथा पांडु की अस्थियों को पालकी में रखवा कर उनका जुलूस निकाला गया और अंत में गंगा नदी में विसर्जित की गयीं। नगर की सारी जनता उनके साथ गंगा तट पर पहुँची। अपर क्रियाओं के समाप्त होते ही सब लोग नगर में लौट आये।

सत्यवती व्यास की सलाह लेकर अपनी बहू अंबिका और अंबालिका को साथ ले जंगलों में तपस्या करने निकली। वहीं पर तपस्या करते उन तीनों ने अपनी जीवन-लीला समाप्त की।

उस दिन से पांडव और कौरव धृतराष्ट्र की देखरेख में बढ़ने लगे। सब मिलकर खेलते, स्पर्धा लगाते। सब खेलों में भीम का हाथ ऊँचा रहता। वह अपनी ताक़त का परिचय देने के लिए एक साथ दस आदमियों को उठाकर दौड़ता। नाराज़ होने पर उन लड़कों की चोटी पकड़ कर ऊपर उठाता। तैरते वक़्त एक साथ दस बारह लड़कों को पानी में दबा देता। लड़के फल तोड़ने पेड़ पर चढ़ जाते तो उस पेड़ को जड़ सहित हिला कर उखाड़ देता। लड़के गिरने के भय से कांप उठते। लड़कों को सताने में भीम को मजा आता। लेकिन वह ईर्ष्या या द्वेष से ऐसा न करता। परंतु उसका उल्लास दूसरे लड़कों की जान की आफ़त बन जाता। भीम का अपार बल देख दुर्योधन ईर्ष्या से जल उठता था। उसके मन में यह विचार पैदा हो गया कि अगर भीम मर जाय तो बाक़ी लोग उसकी उंगली के इशारे पर चलेंगे। इसके लिए एक उचित मौक़ा भी उसे जल्द मिल गया।

गंगा नदी के तट पर प्रमाणकोटि नामक एक स्थान है। वहाँ पर जल-क्रीड़ा करने के लिए चारों तरफ़ सीढ़ियोंवाले तालाब,

उद्यान और ऊँचे महल दुर्योधन ने बनवाये थे। एक दिन सभी राजकुमारों ने वहाँ पर जाने का निश्चय किया। तरह-तरह के भक्ष्य, भोज्य व पेयों का प्रबंध किया गया। सेवक उन पदार्थों को लेकर वहाँ पहुँचे।

राजकुमारों में पांडव भी थे। उन पदार्थों को सब के साथ पांडवों ने भी खाया। लेकिन दुर्योधन ने भीम के पास बैठकर उसे मीठी-मीठी बातें सुनाते उसके भोजन में जहर मिला दिया। भीम को ज़रा भी संदेह न हुआ। उसने सबके साथ जल-क्रीड़ाओं में भाग लिया। जब जहर पेट में हलचल मचाने लगा, तब वह गंगा के तट पर ठण्डी हवा में लेट कर बेहोश हो गया।

दुर्योधन भीम को बेहोश देख बहुत खुश हुआ। उसने भीम के हाथ-पैर लताओं से बंधवा दिया और गंगा के गहरे जल में उसे फेंकवा दिया। भीम को बिलकुल इसका पता न था। वह सीधे पाताल में धँस गया।

पाताल में ज़हरीले सांपों ने भीम को डँस लिया। उनके ज़हर से भीम के पेट का विष हजम हो गया और वह होश में आया। उसने देखा कि उसके हाथ-पैर बँधे हुए हैं। उसने ज्योंही झटका दिया, त्योंही उसके बंधन टूट गये। तब उन सांपों को पकड़ कर भीम ने मारना शुरू किया।

यह खबर वासुकी को मालूम हुई। वासुकी ने आकर भीम को देखा, उसने समझ लिया कि भीम उसका रिश्तेदार ही है। इसलिए वासुकी ने भीम को ले जाकर उसे एक हज़ार हाथियों के बल को प्रदान करनेवाला रस पिलाया। भीम ने आठ घड़ों का वह रस पी लिया और आराम से सो गया।
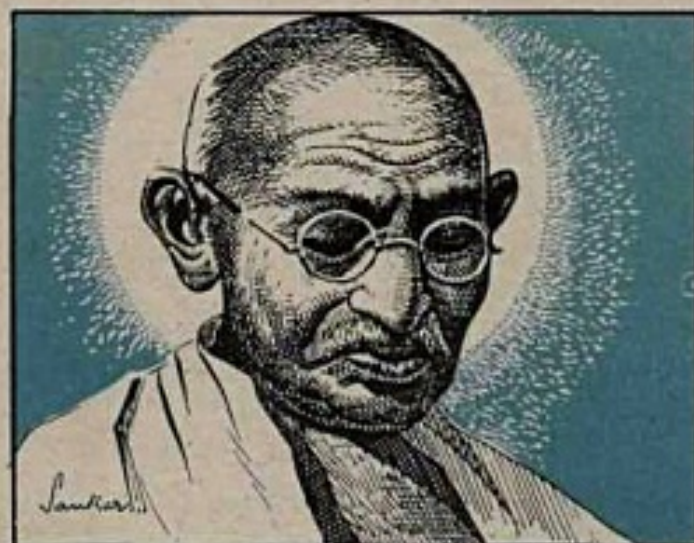
# गांधी की कहानी

[ ६ ]

कुछ गोरे लोगों ने यह आरोप किया था कि हमारे मना करने पर भी भारतीय दक्षिण आफ्रिका में प्रवासी बनकर आये और मुसीबत झेल रहे हैं, परंतु यह आरोप सफ़ेद झूठ है। दक्षिण आफ्रिका जब गोरे लोगों का उपनिवेश बना, तब उन्हें अनायास ही काफ़ी, चाय व ईख पैदा करने के लिए अनुकूल उपजाऊ ज़मीन अधिक मात्रा में मिल गयी। लेकिन फ़सल पैदा करनेवाले किसानों और मज़दूरों की कमी थी। गुलामी प्रथा के समाप्त होने के बाद नीग्रो लोगों ने काम करने से इनकार किया। तब नेटाल के गोरों ने भारत से मजदूरों को भेजने की यहाँ की सरकार से अभ्यर्थना की। उनके प्रतिनिधियों ने मद्रास और बंगाल में भ्रमण किया और मज़दूरों को तरह तरह के प्रलोभन देकर अपने साथ ले गये। १८९० तक नेटाल में ४०,००० भारतीय गोरे लोगों के अधीन में काम कर रहे थे। उनसे बेगारी ली जाती थी। उनमें से कुछ लोगों ने अपना अनुबंध समाप्त होने पर वहाँ अपना स्थिर निवास बनाया। थोड़ी-सी ज़मीन खरीद कर तरकारी पैदा करते अपने बच्चों को पढ़ाते आराम से ज़िंदगी बिताने लगे। इसे देख गोरे लोग ईर्ष्या से भर उठे। उनका उद्देश्य था कि अगर कोई भारतीय नेटाल में रहना चाहे तो वह गुलाम बनकर ही रहे, लेकिन स्वतंत्र नागरिक बनकर नहीं।

सन् १८९३ में नेटाल में डोमीनियन सरकार स्थापित हुई। तुरंत गोरे लोगों ने भारतीयों को नेटाल से भगाने का प्रयत्न किया। जो भारतीय नेटाल छोड़कर नहीं

दक्षिण आफ्रिका के भावी वैभव में हिस्सा न हो।"

भारतीयों को नागरिक अधिकारों से वंचित रखनेवाला एक बिल नेटाल की विधान सभा ने पारित किया, उसे गांधीजी के विरोधी प्रचार के कारण इंग्लैण्ड के कलोनियल कार्यालय ने रद्द किया। लेकिन नेटाल के शासकों ने उस बिल में संशोधन कर उसमें स्पष्ट रूप से जाति-विद्वेष को प्रकट होने से सुधारा। इस कारण से भारतीय स्वेच्छा पूर्वक व्यापार करने से वंचित हो गये।

भारतीय क़ानूनन् जिन कठिनाइयों का सामना कर रहे थे, उनके साथ उन्हें काफ़ी अपमान भी भोगने पड़ रहे थे। चाहे कोई भी पेशा करनेवाला भारतीय मज़दूर ही कहलाता था। मज़दूर शिक्षक, मज़दूर व्यापारी, गांधीजी भी 'मज़दूरों के बैरिस्टर' थे। भारतीय उनकी दृष्टि में 'हीन और असभ्य' थे। वे सड़कों के किनारे चल नहीं सकते थे। रात के समय बाहर नहीं निकल सकते थे। रेल के डिब्बों में भी अगर गोरा आदमी आपत्ति उठाता तो भारतीयों को बाहर निकाल दिया जाता था। वे गोरों के होटलों में नहीं जा

जाते, उन पर पोलटैक्स लगाने की धमकी दी। उन पर जो टैक्स लगाया जानेवाला था, वह पाँच-छे महीनों की मज़दूरी के बराबर था।

नेटाल में आये हुये भारतीयों में व्यापारी भी थे। वे गोरे व्यापारियों जैसे दुष्ट और लोभी न थे। इसलिए वहाँ के भारतीयों और नीग्रोओं ने उनके व्यापार को प्रोत्साहित किया। यह बात भी गोरे लोगों को खटकने लगी। नेटाल सरकार उनके नागरिक अधिकारों को छीनना चाहती थी। वहाँ के राजनीतिज्ञों ने स्पष्ट रूप से प्रकट किया—"भारतवासी को

सकते थे। आश्चर्य की बात तो यह है कि भारतीयों के नेटाल से चले जाने पर गोरे लोगों का जीवन स्तम्भित हो जाता! (यह "केप टाइम्स" का कथन है)

गांधीजी लगभग नेटाल के स्थिर निवासी बने। वे १८९६ में भारत लौटकर अपने परिवार को ले गये। वे जितने समय तक भारत में रहें, उस अवधि में यहाँ दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों की तरफ़ से अच्छा प्रचार किया। वे बंबई में फिरोज शाह मेहता तथा पूना में गोखले और तिलकजी से मिले। हिन्दू, पयोनीर, स्टेट्समैन, इंग्लीशमेन जैसी पत्रिकाओं ने गांधीजी के विचारों का प्रचार किया।

इंडिया में गांधीजी ने जो प्रयत्न किये, उनके संबंध में नेटाल में काफ़ी आफ़वाहें उड़ीं। फलत: गोरे लोग काफ़ी नाराज़ हुये। गांधीजी अपने परिवार के साथ जिस जहाज़ में आये, उसके साथ एक और जहाज़ आया जिस में ४०० भारतीय थे। गोरे लोगों ने संदेह किया कि गांधीजी उनको ला रहे हैं और नेटाल को भारतीयों से भर देना चाहते हैं। यह सोचकर उन लोगों ने भारतीयों को लौटाने के सभी प्रकार के प्रयत्न किये। उन लोगों ने २३ दिन तक उन दोनों जहाज़ों को बंदरगाह में आने से रोका और क्वारंटाइन में रखा। बाक़ी सभी लोग जहाज़ से उतरकर चले गये थे, पर गांधीजी को जहाज़ से उतरने नहीं दिया। लेकिन गांधीजी के मित्र एक गोरे बैरिस्टर ने दख़ल देकर गांधीजी के परिवार को जहाज़ से उतार दिया। जहाज़ से उतरकर जानेवाले गांधीजी के चारों ओर एक बड़ी भीड़ जमा हो गयी और उन पर पत्थर तथा सड़े हुये अण्डे फेंकने लगे। गांधीजी ने कभी न सोचा था कि वे प्राणों के साथ अपने घर पहुँच जायेंगे।

इस बीच में एक पुलिस अधिकारी की पत्नी श्रीमती अलेग्जांडर ने गांधीजी को पहचान लिया और गांधीजी पर अपनी छतरी फैलाकर उनके साथ चलने लगी। सिपाहियों ने आकर उनकी रक्षा की।

गांधीजी उस दिन के घावों से चंगे भी हो न पाये थे कि कुछ गोरों ने आकर उनका घर घेर लिया और धमकी दी– अगर वे उनके अधीन न जावेंगे तो वे घर में आग लगा देंगे। उस वक़्त भी पुलिस अधिकारी अलेग्जांडर ने उनकी मदद की। अधिकारी ने बाहर खड़े होकर भीड़ को बातों में लगाया और इस बीच गांधीजी भारतीय पुलिस की पोशाकें पहनकर, भारतीय व्यापारी के वेश में स्थित एक जासूस को साथ लेकर, भीड़ के बीच से होते हुये पुलिस थाने में जा पहुँचे।

गांधीजी को बहुत दिन तक थाने में छिपने की ज़रूरत न पड़ी। संवाददाताओं ने उनसे मिलकर यह जान लिया कि गांधीजी ने वास्तव में इंडिया में क्या क्या प्रयत्न किये हैं। तब यह साबित हुई कि नेटाल में जो अफ़वाहें उड़ी थीं, वे गलत हैं।

"मिस्टर गांधी के प्रयत्नों में कोई ऐसी बात नहीं जो असंगत हो। नेटाल की हालत के बारे में उन्होंने जो प्रचार किया वह उनकी दृष्टि में न्याय संगत है।" ये बातें नेटाल की एक पत्रिका ने लिखीं।

इस बीच लंदन के औपनिवेशिक मंत्री ने नेटाल सरकार को एक तार भेजा कि गांधीजी पर जिन लोगों ने अत्याचार किया, उन सबको तुरंत गिरफ़्तार करें। पर गांधीजी ने इसको न माना। उन्होंने कहा था–"वास्तव में ऐसी प्रेरणा देनेवाले सरकार के भीतर हैं, ऐसी दशा में आवेश में आकर अत्याचार करनेवाले युवकों को दण्ड देने से फ़ायदा ही क्या है?"

# ९३. "वर्णमालावाला भूगोल"

यह संसार के सभी भूगोलों से बड़ा है। यह ग्लोब अमेरिका के क्रिस्टियन साइन्स पब्लिशिग हाउस में है। इस ग्लोब को तैयार करने में ६०८ रंग बिरंगी कांच के तख्तों का प्रयोग किया है। इसे १५ फुट वृत्तवाले कांसे के चौखट में बिठाया गया है। भूमध्य रेखा के साथ साथ जहाँ-तहाँ काँसे की घड़ियाँ बिठाकर यह सूचित करते हैं कि किस देश की घड़ी कौन सा समय सूचित करती है। परंतु इस भूगोल में अंकित सीमाएँ ई. सन्. १९३५ की हैं। (इसीलिए इसमें पाकिस्तान को भारत से अलग नहीं दिखाया गया है।)

Photo by T. S. Nagarajan
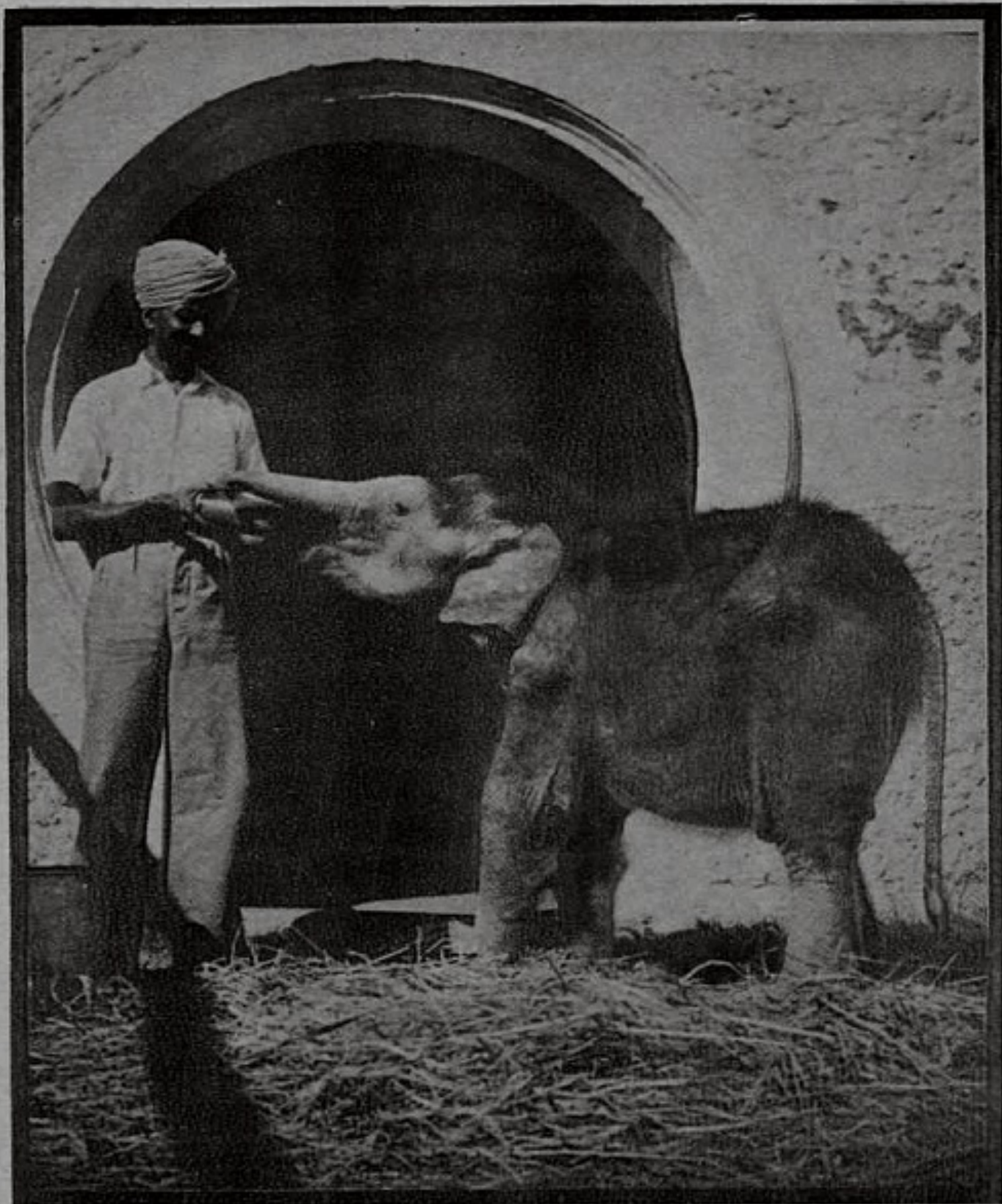
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'मनुष्य और पशु का देखो प्यार'

प्रेषक :
किरन प्रभाकर - भटिंडा

Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'बच्चे से माँ का देखो दुलार'

प्रेषक :
किरन प्रभाकर - भटिंडा

# फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

नवम्बर १९६९ :: पारितोषिक २०)

## कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख १० सितम्बर १९६९ के अन्दर भेजनी चाहिए।

**फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता**
**चन्दामामा प्रकाशन,**
**वड़पलनी, मद्रास-२६**

---

## सितम्बर – प्रतियोगिता – फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को २० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: मनुष्य और पशु का देखो प्यार!
दूसरा फ़ोटो: बच्चे से माँ का देखो दुलार!

प्रेषक: किरन प्रभाकर,
१०१, कंवल सिनेमा, भटिंडा (पंजाब)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road. Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

# चन्दामामा

( लोकप्रिय पत्र, अगणित पाठक )

अब ६ भाषाओं में प्रकाशित होता है।

हिन्दी, मराठी, गुजराती,
तमिल, तेलुगु और कन्नड़

प्रति मास २,५०,००० घरों में पहुँचता है।

आप अपनी पसन्द के माध्यम द्वारा
अपनी बिक्री का संदेश प्रत्येक
परिवार को मेज सकते हैं।

| दाम एक प्रति | सालाना चंदा |
| --- | --- |
| ७५ पैसे | रु. ९-०० |

विवरण के लिए लिखें :

**डाल्टन एजन्सीज्, मद्रास-२६**

- वाटर कलर्स
- पोस्टर कलर्स
- ऑईल कलर्स
- वाटरप्रूफ ड्राइंग इंक
- पोस्टर पेपर्स
- ऑइल पेस्टेल्स
- वेक्स क्रेयान्स
- सैबल और हॉग के बाल का ब्रश
- मार्कर
- स्केचिंग पेन

कॅम्लिन प्राइवेट लिमिटेड
कुर्ला-अंधेरी रोड,
जे. बी. नगर, बम्बई-५९ ए. एस.

## राजू ने प्रथम पुरस्कार जीता !

उसने अपना चित्र कैमल रंग से बनाया था।

कितना उज्वल, बिल्कुल कुदरती रंग जैसा।
वे अच्छी तरह मिल जाते हैं और बहुत दिनों तक चलते हैं।

1st PRIZE

PRATIBHA 603HIN

बच्चों का धर्म है निरीहता
उसका पथ है निरीहता
निरीहता की न कोई
सीमा होती, न जाति।
निरीहता ही उसके लिए
अल्लाय है, कृष्ण है और है
यीशू मशीह जो
उसका स्रष्टा है,
जो सत् है, चित है,
फूलों की बहार सत्य के
विस्फोट के
समान पुराने क़िले में आयी।
नन्हा फ़रिश्ता
ईस्टमेनकलर
बी. नागिरेड्डी (राम और श्याम के
निर्माता) कृत एक
विजया इन्टरनेशनल फ़िल्म।
निर्देशक : टी. प्रकाश राव
संगीत : कल्याणजी आनन्दजी
कहानी : तुरैयूर के. मूर्ति
संवाद : इन्दरराज आनन्द
गीत : साहिर

CHANDAMAMA (Hindi) SEPTEMBER 1969 Regd. No. M. 5452